इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इन्दिरा गांधी
राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
समाज कार्य विद्यापीठ

BSW-122
समाज, सामाजिक संस्थाएं और सामाजिक समस्याएँ

खंड

4

सामाजिक समस्याएँ और सेवाएँ

इकाई 1
सामाजिक समस्याओं का परिचय 229

इकाई 2
सम–सामयिक सामाजिक समस्याएँ–I 243

इकाई 3
सम–सामयिक सामाजिक समस्याएँ–II 259

इकाई 4
सामाजिक सुरक्षा 276

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खंड 4 का परिचय

'सामाजिक समस्याएँ और सेवाएँ' पाठ्यक्रम में चार इकाइयाँ हैं। एक समाज कार्यकर्ता प्रायः समस्याग्रस्त क्षेत्रों या समस्या पीड़ित लोगों के साथ कार्य करता है। उन्हें व्यक्तिगत रूप से समस्या समाधान का प्रयत्न करना पड़ सकता है जैसे व्यक्ति द्वारा स्वयं समस्या हल करने में उनकी सहायता करना। उदाहरण के लिए समाज कार्यकर्ता नशे के आदी को पुनर्वास के लिए प्रोत्साहित कर सकता है। समाज कार्यकर्ता सामुदायिक स्तर पर भी समस्या संभाल सकता है। कुछ कार्य नीतियाँ सरकारी नीतियों को प्रभावित कर सकती हैं, आवश्यक कार्यवाही करने के लिए नौकरशाही को मनाया जा सकता है तथा जागरूकता अभियान आदि चलाए जा सकते हैं। कार्यनीति चाहे कोई भी समाज कार्यकर्ता को सामाजिक समस्याओं के आयामों और उनके कारणों के बारे में पूरी जानकारी होनी चाहिए।

पहली इकाई – 'सामाजिक समस्याओं का परिचय' सामाजिक समस्याओं की संकल्पना से अवगत कराती है तथा इनके कारणों को पहचानने की विभिन्न विचारधाराओं के तरीके तथा उनके विभिन्न समाधान सुझाती है। **दूसरी इकाई** 'सम–सामयिक सामाजिक समस्याएँ–I' सामाजिक समस्याएँ जैसे एचआईवी/एड्स, आप्रवास, और विस्थापन, पर्यावरणीय विकार, साम्प्रदायिकता, युवा असंतोष तथा भ्रष्टाचार जैसी समस्याओं के विभिन्न आयाम एवं कारकों का वर्णन करती है। तीसरी इकाई 'सम–सामयिक सामाजिक समस्याएँ–II' दूसरी सामाजिक समस्याएँ जैसे आत्महत्या, नशीली दवाओं का दुरुपयोग, वरिष्ठ नागरिक अपराध, बाल अपराध, अल्पसंख्यक, पिछड़ा वर्ग और महिलाओं जैसे वंचित वर्गों की समस्याओं को प्रस्तुत करती है। **अंतिम इकाई** 'सामाजिक सुरक्षा का उद्देश्य' सामाजिक सुरक्षा की संकल्पना एवं परंपरा से अवगत कराना है। सामाजिक सुरक्षा से संबंधित सामाजिक सुरक्षा की संस्था सर्वोच्च संस्था है। अतः इस इकाई में इसके कार्यक्रमों और गतिविधियों की विस्तृत चर्चा की गई है।

इकाई 1 सामाजिक समस्याओं का परिचय

रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 परिभाषा

1.3 सामाजिक समस्याओं की विशेषताएँ

1.4 भारतीय संदर्भ में सामाजिक समस्याएँ

1.5 सामाजिक समस्याओं के प्रकार

1.6 व्यवस्थाजन्य कारकों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ

1.7 सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के दृष्टिकोण

1.8 सामाजिक समस्याओं के प्रति समाज की प्रतिक्रिया

1.9 सारांश

1.10 शब्दावली

1.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न करने वाले संदर्भ को परिभाषित करते हुए विभिन्न कारणों एवं क्रमिक कारकों को समझते हुए सामाजिक समस्याओं को जानने के लिए ढांचा तैयार करना है। इसमें सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के लिए दृष्टिकोण प्रस्तुत करने का भी प्रयास किया गया है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- सामाजिक समस्याओं और उनके संदर्भ को समझ सकेंगे;
- सामाजिक समस्याओं की विशेषताओं और उनके प्रकारों की व्याख्या कर सकेंगे;
- सामाजिक समस्याएँ पैदा करने वाले सामाजिक कारकों की चर्चा कर सकेंगे;
- सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के लिए विभिन्न दृष्टिकोणों का वर्णन कर सकेंगे; और
- सामाजिक समस्याओं के प्रति सामाजिक प्रतिक्रिया की व्याख्या कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

कुछ विपरीत परिस्थितियों के हानिप्रद परिणाम समाज को प्रभावित कर सकते हैं। इनसे समाज की सामान्य कार्यप्रणाली प्रभावित हो सकती है। इन्हें सामाजिक समस्याएँ कहा जाता है। ये समस्याएँ इसलिए उत्पन्न होती हैं क्योंकि प्रत्येक समाज के कुछ प्रतिमान एवं मूल्य होते हैं। जब इन प्रतिमानों और मूल्यों का उल्लंघन होता है तो सामाजिक समस्या उत्पन्न होती है। इन्हें सामाजिक समस्या इसलिए कहा जाता है क्योंकि प्रतिमानों एवं मूल्यों में ऐसे विचलन समाज के लिए अप्रकार्यात्मक होते हैं।

सामाजिक समस्याओं के कुछ उदाहरण हैं– नशे की आदत, आतंकवाद, युवा असंतोष, बाल अपराध, भ्रष्टाचार, महिलाओं के प्रति अपराध, पर्यावरणीय विकार आदि।

फिर भी सभी सामाजिक प्रतिमानों और मूल्यों के उल्लंघन से सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न नहीं होती। जैसे जब कोई व्यक्ति नए तरह से अपने बाल बनाता है तो इससे कोई सामाजिक समस्या उत्पन्न नही होती। इसी प्रकार सामाजिक समस्याएँ समय और स्थान सापेक्ष होती है। पहले धूम्रपान को सामाजिक समस्या नहीं माना जाता था। परन्तु आजकल स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता बढ़ने से इसे एक बड़ी सामाजिक समस्या माना जाने लगा है। इसी प्रकार मध्य कालीन भारत में सही होना कोई समस्या नहीं माना जाता था लेकिन आज के भारत में इसे सामाजिक समस्या के रूप में देखा जाने लगा है।

कतिपय व्यवहारों को एक समाज में समस्या माना जा सकता है जबकि हो सकता है वही व्यवहार दूसरे समाज में समस्या न समझा जाता हो। इसका कारण यह है कि सभी समाजों में प्रतिमान और मूल्य एक समान नहीं होते। कुछ समाजों में तलाक एक गंभीर समस्या मानी जा सकती है जबकि हो सकता है कि दूसरे समाजों में ऐसा न हो। फिर भी कुछ कार्य सभी समाजों में हानिप्रद माने जाते है जैसे हत्या, आंतकवाद, बलात्कार आदि।

1.2 परिभाषा

अनेक विद्वानों ने सामाजिक समस्या को परिभाषित करने का प्रयत्न किया है लेकिन एक सर्वमान्य परिभाषा को ढूंढना काफी कठिन है। कूलर और मेयर्स के अनुसार एक सामाजिक समस्या "वह स्थिति है जिसे पर्याप्त व्यक्तियों द्वारा दीर्घकाल से पोषित कुछ सामाजिक मूल्यों से भिन्न माना जाता है। इसी प्रकार मर्टन और निस्बेट ने सामाजिक समस्या को किए जाने वाले किसी व्यवहार को अधिकांश समाज द्वारा एक या अधिक सामान्यतः स्वीकृत नियमों के उल्लंघन के रूप में देखे जाने के रूप में परिभाषित किया है।" ये दोनों परिभाषाएँ कुछ सामाजिक समस्याओं पर लागू होती है जैसे भ्रष्टाचार, नशे की आदत और सांप्रदायिकता। लेकिन यह जनसंख्या विस्फोट जैसी समस्या पर लागू नहीं होती। फिर कुछ समस्याएँ व्यक्तियों के असामान्य एवं विचलित व्यवहार से नहीं अपितु सामान्य एवं स्वीकृत व्यवहार से उत्पन्न होती हैं। जैसे पंजाब और हरियाणा के कुछ क्षेत्रों में मिट्टी का कटाव, खेती की स्वीकृत प्रणाली के कारण किया जाता है। इस प्रकार के विकार के अनुसार 'एक सामाजिक समस्या उस कठिनाई की जागरूकता से उत्पन्न होती है जो हमारी प्राथमिकता और वास्तविकता के बीच अन्तर से बनती है।

1.3 सामाजिक समस्याओं की विशेषताएँ

उपर्युक्त चर्चा और परिभाषाओं से सामाजिक समस्याओं की निम्नलिखित विशेषताएँ बताई जा सकती है :

1) सभी सामाजिक समस्याएँ समाज के लिए हानिकारक परिणाम पैदा करने वाली परिस्थितियाँ होती हैं।

2) सभी सामाजिक समस्याएँ आदर्श स्थिति के विपरीत होती हैं।

3) सामाजिक समस्याएँ कई कारणों से होती हैं।

4) ये सभी कारण मूलतः सामाजिक होते हैं।

5) सामाजिक समस्याएँ परस्पर संबंधित होती हैं।

6) सामाजिक समस्याएँ समाज के प्रत्येक सदस्य को प्रभावित करती हैं।

7) सामाजिक समस्याएँ विभिन्न व्यक्तियों पर भिन्न–भिन्न प्रभाव डालती हैं।

1.4 भारतीय संदर्भ में सामाजिक समस्याएँ

हमने देखा है कि समय के अनुसार सामाजिक समस्याएँ बदलती रहती है। भारत में सामाजिक समस्याएँ विभिन्न ऐतिहासिक कालों में बदलती रही हैं। बड़ी सामाजिक समस्याएँ प्रत्येक काल में विद्यमान सामाजिक प्रतिमानों और मूल्यों का वर्णन करती हैं।

भारतीय सभ्यता के आरंभिक काल में बड़ी सामाजिक समस्याएँ सामाजिक संस्तरण, आर्यों और दासों के बीच निरन्तर संघर्ष, धार्मिक अनुष्ठानों पर जोर तथा पशु बलि आदि को कठोर बनाती जा रही थी। भारत में मुस्लिम शासन आने से नई सामाजिक समस्याएँ जैसे सती प्रथा, पर्दा प्रथा, तथा मुस्लमानों में जाति प्रथा आदि उत्पन्न हुई।

समसामयिक भारत में अनेक सामाजिक समस्याएँ है। ये हैं–आतंकवाद, हिंसा, महिलाओं, बच्चों और अल्पसंख्यकों के प्रति अपराध, बेरोज़गारी, गरीबी, नशे की आदत, सांप्रदायिकता, युवा असंतोष, भ्रष्टाचार, आप्रवास एवं विस्थापन, पर्यावरणीय विकार, जनसंख्या वृद्धि, वेश्यावृति, एचआईवी/एड्स आदि। ये समस्याएँ आर्थिक, राजनीतिक, वैधानिक, सांस्कृतिक ऐतिहासिक एवं अन्य दूसरे कारणों के परिणाम हैं।

बोध प्रश्न I

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) सामाजिक समस्याएँ क्या हैं? वे कैसे उत्पन्न होती हैं?

.....

.....

.....

.....

2) सामाजिक समस्या को परिभाषित करना क्यों कठिन है?

.....

.....

.....

.....

3) सामाजिक समस्याओं की विशेषताएँ बताइए।

.....

.....

.....

.....

4) भारत में समसामयिक कुछ सामाजिक समस्याओं का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

1.5 सामाजिक समस्याओं के प्रकार

मौटे तौर पर सामाजिक समस्याओं को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। वैयक्तिक सामाजिक समस्याएँ तथा सामूहिक सामाजिक समस्याएँ। व्यक्तिगत सामाजिक समस्याओं में शामिल हैं– बाल अपराध, नशे की आदत, आत्म हत्या आदि। सामूहिक सामाजिक समस्याएँ, सामाजिक नियंत्रण प्रणाली के अपने सदस्यों पर नियंत्रण करने में असफल रहने या प्रभावशाली संस्थागत कार्यप्रणाली के भंग होने के कारण उत्पन्न होती हैं। जैसे गरीबी, शोषण, जनसंख्या वृद्धि, अस्पृश्यता, अकाल, बाढ़ आदि।

सामाजिक समस्याओं को उनके कारणों के संदर्भ में निम्नलिखित प्रकार से भी विभाजित किया जा सकता है :

1) सामाजिक कारण से होने वाली सामाजिक समस्याएँ।
2) सांस्कृतिक कारणों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ।
3) आर्थिक कारणों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ।
4) राजनीतिक और वैधानिक कारणों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ।
5) पर्यावरणीय कारणों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ।

1) सामाजिक कारकों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ

विजातीय प्रकार के समाज अनेक सामाजिक समस्याओं के कारण रहे हैं। भारज जैसे विजातीय समाजों में जहाँ अनेक धर्मों, जातियों, भाषा समूहों और जन–जातीय समूहों के लोग एक साथ रहते हैं अनेक प्रकार की सामाजिक समस्याएँ देखी जा सकती है।

विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच संघर्षों ने सांप्रदायिकता की समस्या को बढ़ा दिया है। भारत में हिन्दू–मुसलमान संघर्ष एक बड़ी समस्या रही है। यहाँ हिन्दुओं और सिक्खों तथा हिन्दुओं और ईसाइयों के बीच संघर्ष हुए हैं। इसी प्रकार जाति प्रथा ने समाज को कई समूहों में बाँट रखा है। इससे एक समूह दूसरे समूह के साथ भेद–भाव करता है। भारत में छुआ–छूत की समस्या जाति प्रथा के कारण है। जाति प्रथा से ही देश शिक्षा क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है। पारंपरिक रूप से जाति ही शिक्षा के लिए लोगों की योग्यता निर्धारित करती थी। पारंपरिक व्यवस्था में शिक्षा को उच्च जातियों का विशेषाधिकार माना जाता था। जिसके परिणामस्वरूप लोगों को शिक्षा से वंचित कर दिया जाता था। इससे भारत में अशिक्षा की उच्च दर का पता लगता है।

सामाजिक समस्या एक अन्य सामाजिक कारण भाषा से भी उत्पन्न हो सकती है। अनेक भाषाएँ बोलने वाले देश में विभिन्न भाषा–भाषी समूहों में संघर्ष देखें जा सकते हैं। भारत में भी विभिन्न भाषा–भाषी समूहों के बीच संघर्ष देखे गए हैं। असम और तमिलनाडु इसके उदाहरण हैं।

2) सांस्कृतिक कारकों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ

सामाजिक समस्याओं के लिए अनेक सांस्कृतिक कारक भी जिम्मेदार होते हैं। भारत जैसे पारंपरिक समाज में सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न करने वाले कुछ सांस्कृतिक कारक इस प्रकार हैः

क) लड़के को प्राथमिकता देना
ख) पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था
ग) सार्वजनिक संपत्ति के लिए समुचित सम्मान का अभाव

भारत में ऐसी मूल्य व्यवस्था है कि परिवार में एक बेटे का होना आवश्यक माना जाता है तथा और अधिक बेटे रखने की इच्छा होती है। इस कारण परिवार में सदस्यों की संख्या बढ़ती जाती है। इससे जनसंख्या विस्फोट की स्थिति पैदा हो गई है। आजादी के बाद भारत में जनसंख्या वृद्धि असाधारण दर से हुई है। आज देश की आबादी एक अरब से काफी अधिक हो गई है जिससे यह विश्व का दूसरा सबसे अधिक आबादी वाला देश बन गया है।

विश्व में अन्य देशों की भांति भारतीय समाज भी कमोवेश पितृसत्तात्मक है जहाँ महिला पुरुष के अधीन होती है। उनकी भूमिका एक पत्नी या एक माता से अधिक नहीं देखी जाती। लगभग जीवन के सभी क्षेत्रों में उन्हें समाज में पुरुषों से निम्न सामाजिक प्रस्थिति प्रदान की जाती है। इस प्रकार लगभग आधी आबादी सुविधाओं से वंचित रह जाती है। यह वंचन अनुसूचित जाति या अनुसूचित जन–जाति की महिलाओं के मामले में कई गुणा बढ़ जाता है।

भारतीय समाज की एक और विशेषता भ्रष्टाचार है जिसमें निहित है सार्वजनिक संपत्ति के प्रति सम्मान न होना। सार्वजनिक संपत्ति के प्रति सम्मान का अभाव भ्रष्टाचार, काला धन, कर वंचना, सार्वजनिक वस्तुओं का दुरुपयोग तथा सार्वजनिक निर्माण कार्यों में घटिया सामग्री उपयोग करने का एक मूल कारण है।

3) आर्थिक कारकों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ

समकालीन समाज की कुछ बड़ी सामाजिक समस्याओं के लिए आर्थिक कारण भी होते है। यह भारत जैसे विकासशील देशों के संदर्भ में एक दम स्पष्ट है। धन के असमान वितरण से विकास के द्वारा होने वाले लाभों के वितरण में विसंगतियाँ पैदा हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप गरीबी की समस्या होती है। बदले में गरीबी से अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है जैसे उच्च रोगी व मृत्यु दर, अपराध, गन्दी बस्ती, अशिक्षा आदि।

फिर भारत में आधुनिकीकरण और औद्योगिकरण की प्रक्रिया काफी धीमी है। इससे आर्थिक विकास में क्षेत्रीय विषमता पैदा हो गई है। कुछ क्षेत्रों में उच्च स्तरीय औद्योगिक एवं शहरी विकास देखा जा सकता है। फिर भी कुछ क्षेत्र अभी भी अविकसित हैं। इससे अविकसित क्षेत्रों से अत्यधिक लोग विकसित क्षेत्रों में स्थानांतरित हो गए। इससे दोनों ही क्षेत्रों में जनसंख्या संरचना प्रभावित हुयी है। इसके अतिरिक्त जिन स्थानों में अप्रवासी आकर बसते हैं वहाँ बस्ती, भीड़, बेरोज़गारी और जनसंख्या आदि की समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है।

4) राजनीतिक और वैधानिक कारकों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ

कुछ राजनीतिक कारण जैसे चुनावी राजनीति, राजनीतिक कार्य प्रणाली तथा भ्रष्टाचार आदि सामाजिक समस्याएँ पैदा कर सकते हैं। चुनाव जीतने और सत्ता प्राप्त करने के लिए राजनीतिक दल जाति, धर्म और भाषा आधारित संघटन के सांप्रदायिक या संकीर्ण तरीके अपनाने से संकोच नहीं करते। यहाँ तक कि सत्तारूढ दल द्वारा किए गए कुछ निर्णय सामाजिक समस्या उत्पन्न कर सकते है क्योंकि हो सकता है कि उनसे संपूर्ण समाज के हितों की कीमत पर किसी वर्ग विशेष को लाभ हो। इससे समाज के विभिन्न वर्गों के बीच संघर्ष भी हो सकता है। एक अन्य समस्या बढ़ते राजनीतिक भ्रष्टाचार की है। नेताओं को भाई–भतीजावाद और लाल–फीताशाही करते देखा गया है। उन्हें किए गए किसी पक्षपात के बदले धन स्वीकार करते हुए भी देखा गया है।

5) पर्यावरणीय कारकों से उत्पन्न होने वाली सामाजिक समस्याएँ

पहले शीघ्र विकास करने की कोशिश में पर्यावरण की पूरी तरह उपेक्षा की जाती थी। ऐसी कोशिश के पर्यावरणीय परिणाम अब बड़ी सामाजिक समस्या के रूप में

प्रकट होने लगे है। शीघ्र औद्योगिककरण से पर्यावरण प्रदूषण बढ़ गया जिसमें वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण भूमि का कटाव और भूमि का विकृत होना शामिल है। इससे रोगी और मृत्यु दर में वृद्धि होती है, नए प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं भूमंडल ताप में वृद्धि, ओजोन पर्त में छिद्र होना तथा बाढ़ आदि में वृद्धि होती है। जिससे मानव जाति के अस्तित्व को खतरा हो गया है। फिर विश्व की बृहत आबादी के भोजन के लिए अधिकाधिक भूमि में खेती की जाती है। इससे भूमंडलीय पर्यावरण संतुलन विकृत हो गया है। कृषि में आधुनिक तकनीकी साधन जैसे कीटनाशक, खरपतवार नाशक, विषाणु नाशक, अधिक फसल देने वाले बीज तथा परिवर्तित फसलों के प्रयोग से विश्व की जैविक भिन्नता का खतरा पैदा हो गया है। इससे ऐसे शक्तिशाली खरपतवार एवं जीवाणु उत्पन्न होने की संभावना बढ़ गई है जो मानव नियंत्रण से बाहर हो सकते हैं।

1.6 व्यवस्थाजन्य कारकों से होने वाली सामाजिक समस्याएँ

मर्टन के अनुसार, सामाजिक समस्याएँ सामाजिक विघटन या व्यक्तियों के भ्रष्ट व्यवहार से भी उत्पन्न हो सकती हैं जैसे सभी समाजों में मूल्यों और हितों पर सर्व सम्मति होती है। जब कभी यह मतैव्य की स्थिति विपरीत हितों के कारण विकृत होती है तो किसी समाज विशेष में विघटन की प्रवृत्तियाँ देखी जा सकती है। इसी प्रकार अपर्याप्त सामाजिक व्यवस्था से भी सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती है। समाज अपने सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए सामाजिक नियंत्रण की औपचारिक एवं अनौपचारिक प्रणाली विकसित करता है। जब कभी ये प्रणालियाँ प्रभावशाली ढंग से कार्य नहीं करती हैं तो समाज में विघटनकारी प्रवृत्तियाँ प्रकट होने लगती हैं।

इस प्रकार सामाजिक विघटन कई प्रकार के संदर्भों के कारण होता है जैसे प्रभावशाली संस्थागत कार्य प्रणाली का ठप होना, पारिवारिक विघटन, विवाह विच्छेद, गरीबी, हिंसा, अपराध, जनसंख्या वृद्धि तथा युवा असंतोष जैसी सामुदायिक अव्यवस्था आदि।

परिवर्तित व्यवहार नियमों, मूल्यों तथा नैतिक मानदंडों के उल्लंघन में झलकता है। प्रत्येक समाज में सामान्य व्यवहार का सर्वसम्मत विचार होता है। जब कभी कोई स्वीकृत नियम से हटकर भिन्न व्यवहार करता है तो उस व्यवहार को असामान्य या परिवर्तित व्यवहार माना जा सकता है। बाल अपराध, नशे की आदत, आत्महत्या और वेश्यावृत्ति इसके कुछ उदाहरण हैं।

बोध प्रश्न II

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) सामाजिक समस्या पैदा कर सकने वाले कुछ सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) पारिस्थितिकी कारकों से होने वाली मुख्य सामाजिक समस्याएँ क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

3) सामाजिक अव्यवस्था के कारण होने वाली कुछ सामाजिक समस्याओं का विस्तृत विवरण दीजिए।

.....

.....

.....

.....

1.7 सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के दृष्टिकोण

सम–सामयिक समाज द्वारा अनुभव की जाने वाली सामाजिक समस्या के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन हुआ है। पहले सामाजिक समस्याओं और उनकी उत्पत्ति व्यक्ति को केन्द्र बिन्दु बना कर बताई जाती थी चूँकि ऐसी समस्याओं के कारण व्यक्ति की जैविक संरचना में माने जाते थे इसीलिए उनका निराकरण असंभव माना जाता था। अब सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक या संरचनात्मक कारकों पर जोर दिया जाता है। इस प्रकार सम–सामयिक विचारधारा सामाजिक समस्या के कारक पर व्यक्तिगत स्तर पर विचार करने की अपेक्षा अनेक स्तर पर विचार करती है। फिर पहले सामाजिक क्रम बनाए रखने के साथ सामाजिक संतुलन पर जोर दिया जाता था जिससे सामाजिक परिवर्तन होने में संदेह होने लगता है। अब यह स्वीकृत हो गया है कि सामाजिक समस्याएँ समाज में विद्यमान विरोधों के कारण उत्पन्न होती हैं जिन्हें इन विरोधों को समाप्त करके ही हल किया जा सकता है।

वर्तमान में सामाजिक समस्याओं की प्रकृति और उत्पत्ति के अध्ययन की दो महत्वपूर्ण दृष्टिकोण हैं जो इस प्रकार हैं :

- प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण
- मार्क्सवादी दृष्टिकोण
- गांधीवादी दृष्टिकोण

प्रकार्यात्मक विचारधारा

यह विचारधारा समाज को एक व्यवस्था के रूप में देखती है। एक व्यवस्था या प्रणाली के परस्पर संबंधित भाग होते हैं जो मिलकर एक पूरी व्यवस्था का निर्माण करते हैं। विश्लेषण की मूलभूत इकाई समाज है और इसके विभिन्न भागों को समग्र के साथ उनके संबंधों के रूप में विचार किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक संस्थाएँ जैसे परिवार, धर्म और विवाह वे भाग है जो एक समग्र अर्थात् समाज का निर्माण करते हैं। प्रकार्यात्मक विचारधारा के विद्वान सामाजिक संस्थाओं को समाज के भाग के रूप में विचार करते हैं न कि अलग–अलग इकाई के रूप में।

समाज के भाग तभी क्रियात्मक रहते है जब वे प्रणाली या व्यवस्था बनाए रखते हैं और उसके स्वस्थ बने रहने में अपना योगदान देते हैं। यदि कोई हिस्सा या भाग समाज की

सामान्य कार्यप्रणाली में बाधा या इसके अस्तित्व के लिए खतरा बनता है तो इसकी कार्यप्रणाली दोषपूर्ण हो जाती है। प्रकार्यात्मक विचारधाराओं के अनुसार दोषपूर्ण कार्यप्रणाली की संकल्पना सामाजिक समस्याओं के आधुनिक अध्ययन में काफी महत्वपूर्ण है। कुछ महत्वपूर्ण प्रकार्यवादी विचारक हैं– आगस्ट कौम्त, हर्बर्ट स्पेंसर, एमाइल दुर्खाइम, टालकॉट पर्सस और आर.के. मर्टन।

मर्टन के अनुसार सामाजिक समस्याओं के अध्ययन में समाज में व्यवहार के दोषपूर्ण स्वरूप, विश्वास और संगठन पर विचार करना आवश्यक है। ऐसी सामाजिक दुष्क्रिया तब उत्पन्न होती है जब किसी प्रकार्यात्मक आवश्यकता को पूरा करने में व्यवस्था के किसी भाग की विशिष्ट कमी हो। जैसे औद्योगीकरण और शहरीकरण के परिणामस्वरूप संयुक्त परिवार से छोटे परिवार में परिवर्तन वृद्धों की देखभाल की दृष्टि से अप्रकार्यात्मक हैं। परिणामस्वरूप वृद्धजनों की देखभाल करना एक सामाजिक समस्या बन गई है।

एक सामाजिक व्यवस्था कुछ के लिए प्रकार्यात्मक तो दूसरों के लिए अप्रकार्यात्मक हो सकती है। जैसे एक बड़ा बांध इसके लाभार्थियों के लिए प्रकार्यात्मक हो सकता है लेकिन इससे विस्थापित होने वालों के लिए यह अप्रकार्यात्मक है। अत्यधिक अप्रकार्य से सामाजिक स्थिरता भंग कर नई सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न करती है। फिर, समाज विभिन्न भागों में संतुलन बनाए रखने के लिए प्रतिमानों और मूल्यों की कुछ नियमावली बनता है। फिर भी बहुधा ऐसे हालात उत्पन्न हो जाते हैं जो ऐसे सामाजिक नियमों को भंग करते है। इससे सांप्रदायिकता जैसी सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

मार्क्सवादी दृष्टिकोण

मार्क्सवादियों का दृष्टिकोण है कि आदिम और साम्यवादी समाजों को छोड़कर सभी समाज दो वर्गों यानी शासक और शासित वर्गों में विभाजित होते हैं। शासक वर्ग संख्या में कम होते हुए भी अधिसंख्यक शासित वर्ग का शोषण करता है। जैसे सामंवादी समाज में मालिक अपने दासों का शोषण करता है। पूँजीवादी समाज में पूँजीपति अपने श्रमिकों का शोषण करते हैं। इससे इन दोनों वर्गों के बीच हितों का मूलभूत संघर्ष होता है क्योंकि एक वर्ग दूसरे वर्ग की कीमत पर लाभ अर्जित करता है। इसके फलस्वरूप इन सभी समाजों में कुछ मूलभूत विरोध बना रहता है। इसलिए ये अपने विद्यमान स्वरूप में जीवित नहीं रह सकते। मार्क्सवादियों के अनुसार समाज में सामाजिक समस्याएँ स्वयं व्यवस्था से उत्पन्न विरोधों के कारण होती है।

मार्क्स के अनुसार पूँजीवादी समाज की कुछ सामाजिक समस्याएँ इस प्रकार है :

- एक व्यक्ति के द्वारा दूसरे व्यक्ति का शोषण,
- असंबद्धता,
- असमानता, और
- गरीबी

अधिकतम लाभ अर्जित करने के लिए पूँजीपति यथा संभव न्यूनतम मजदूरी देने का और श्रमिकों से अधिकतम श्रम प्राप्त करने का प्रयत्न करते है। इस प्रकार पूँजीपति श्रमिकों का शोषण करते हैं क्योंकि वे उनके श्रम का उचित भुगतान नहीं करते। श्रमिकों को उत्पादन प्रक्रिया में कुछ भी कहने का अधिकार नहीं होता। उन्हें पूँजीपतियों की इच्छानुसार वस्तुओं का उत्पादन करना होता है। इसलिए उनका अपने उत्पादों से कोई संबंध नहीं होता। समाज में उत्पादन इकाइयों का भी असमान वितरण है। इससे समाज में असमानता उत्पन्न होती है। यह असमानता बढ़ती जाती है क्योंकि पूंजीपति और अधिक धनाड्य तथा श्रमिक और अधिक निर्धन होते जाते हैं। धन का पूँजीपतियों के हाथ में एकत्रित होने से गरीबी में वृद्धि होती जाती है।

मार्क्स का विश्वास था कि इन समस्याओं का समाधान विद्यमान सामाजिक संरचना अर्थात पूँजीवाद में सुधारों के माध्यम से संभव नहीं है। इसकी अपेक्षा इसके लिए सामाजिक संरचना में व्यापक परिवर्तन आवश्यक है जिसमें पूंजीवाद को साम्यवाद में बदला जाना चाहिए।

फिर भी मार्क्सवादी दृष्टिकोण की आलोचना की जाती है क्योंकि यह भौतिक ताकतों की भूमिका और संघर्ष पर अत्यधिक बल देती है। इसने नए व्यवसायों, कार्यों और मध्य वर्ग की अनदेखी करते हुए पूँजीवादी समाज की वर्ग संरचना को अत्यधिक सरल मान लिया है।

गांधीवादी दृष्टिकोण

गांधी ने सामाजिक समस्याओं को समझने के लिए एकदम भिन्न परिप्रेक्ष्य दिया है। सामाजिक समस्याओं के बारे में उनके विचार सर्वोदय और स्वराज पर उनके विचारों में निहित है। गांधी दृष्टिकोण दया सत्य और अहिंसा के मूल्यों पर आधारित है। वह समाज को एकीकृत संगठन मानते थे। इस प्रकार वह मार्क्सवादियों से सहमत नहीं थे। गांधी के अनुसार विभिन्न वर्गों के हितों में टकराहट तो हो सकती है लेकिन हितों की टकराहट समुदाय की एकता से बड़ी नहीं होती।

इस प्रकार गांधी की व्याख्या में संपूर्ण समुदाय के उद्देश्य की एकता सर्वोपरि है। संघर्ष की अपेक्षा सहयोग समाज की मुख्य विशेषता है। समुदाय का निर्माण करने वाले विभिन्न वर्ग संपूर्ण समुदाय के कल्याण के लिए एक साथ कार्य या सहयोग करते हैं।

गांधी ने इस दृष्टिकोण का खंडन किया है कि समाज का आर्थिक आधार पर पुनर्गठन करने से सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याएँ समाप्त हो जाएगी। समाज का मात्र आर्थिक पुनर्गठन सामाजिक समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता। किए जाने वाले परिवर्तन संपूर्ण होने चाहिए। समुदाय के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में व्यापक परिवर्तन करने होंगे। गांधीवादी दृष्टिकोण हिंसक क्रांति और उत्पीड़क परिवर्तन का विरोध करती है। क्रांति धीमी होनी चाहिए तथा जनता को जागरूक बनाने के द्वारा की जानी चाहिए। इस प्रकार सामाजिक समस्याओं पर नियंत्रण करने के लिए जनता को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक रूप से जागरूक करने का कार्यक्रम आरंभ किया जाना चाहिए।

कानून के माध्यम से व्यापक आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन करने की बात के लिए गांधी का विरोध किया गया। समाज धीरे–धीरे स्वयं अपनी पहल और प्रयत्नों से परिवर्तित होता है। यदि समाज स्वयं परिवर्तन की दिशा में अग्रसर है तो कानून परिवर्तनों में सहायता कर सकता है। परिवर्तन समाज में आरोपित नहीं किए जाने चाहिए।

गांधीवादी दृष्टिकोण धारा विद्यमान व्यवस्था की समीक्षा प्रस्तुत करती है, नए समाज के कुछ मूलभूत तथ्य प्रस्तुत करती है तथा सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए एक प्रणाली प्रदान करती है। आलोचकों का तर्क है कि गांधीवादी विचारधारा में मौलिकता का अभाव है तथा यह पारंपरिक भारतीय सोच, कल्याणकारी सोच और समानता का मिश्रण है। यह आदर्शवादी है और सामाजिक वास्तविकताओं से दूर है। फिर भी, यह अवश्य याद रखना चाहिए कि संप्रदायवाद के विरुद्ध इसका अश्वेतों द्वारा अमेरिका और दक्षिण अफ्रीका में तथा यहां तक कि पूर्वी यूरोपीय लोगों द्वारा सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है।

1.8 सामाजिक समस्याओं के प्रति समाज की प्रतिक्रिया

सामाजिक समस्याएँ समाज की स्थिरता के लिए खतरा होती है। यदि सामाजिक समस्याओं के कारणों का पता लग जाए तो सामाजिक समस्याओं का समाधान ढूँढा जा

सकता है। प्रायः सामाजिक समस्याओं के अनेक कारण होते हैं। फिर भी मुख्य कारक के सही विश्लेषण से सामाजिक समस्या के उत्पन्न होने और बढ़ने में सहायक कारकों एवं छोटे–छोटे वृद्धि कारकों की पहचान की जा सकती है। सामाजिक समस्या को समझने और उसका निर्णय करने के बाद सामाजिक प्रतिक्रिया रचनात्मक होनी चाहिए ताकि प्रभावशाली कार्यवाही की जा सके।

समस्या नियंत्रण के लिए एक समाज विद्यमान संस्था में सकारात्मक परिवर्तन या नई संस्था स्थापित कर सकता है। इस प्रकार समाज की प्रतिक्रिया दो स्तरों पर होती है संगठित प्रतिक्रिया और वैयक्तिक प्रतिक्रिया। संगठित प्रतिक्रिया सामूहिक स्तर पर राज्य, गैर सरकारी संगठनों (एनजीओज) और आत्म सहायता समूहों (एसएचजीज) जैसे संगठनों द्वारा की जाती है। वैयक्तिक स्तर पर यह प्रतिक्रिया समस्या समाधान के लिए सामाजिक रूप से संबंधित व्यक्तियों द्वारा की जाती है, जैसे, अस्पृश्यता की समस्या उन्मूलन के लिए बाबा आमटे के प्रयत्न।

लेकिन कई समस्याएँ जैसे प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न होने वाली समस्याओं पर नियंत्रण करना कठिन होता है जैसे बाढ़ या भूकंप। ऐसे मामले में समाज समस्या के प्रभाव को कम करने का प्रयत्न कर सकता है।

बोध प्रश्न II

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) सामाजिक समस्याओं का सम–सामयिक संदर्भ पूर्वकालीन समस्याओं से कैसे भिन्न है?

.....

.....

.....

.....

1) सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के महत्वपूर्ण दृष्टिकोण कौन से हैं?

.....

.....

.....

.....

3) सामाजिक समस्याओं के अध्ययन का गांधीवादी दृष्टिकोण अन्य दृष्टिकोणों से कैसे भिन्न है?

.....

.....

.....

.....

1.9 सारांश

यह इकाई सामाजिक समस्याओं के परिचय से आरंभ होती है और फिर उन्हें परिभाषित करने के प्रयास करती है। इसके आधार पर सामाजिक समस्याओं की मुख्य विशेषताएँ बताई गई हैं और भारतीय संदर्भ में सामाजिक समस्याओं की समीक्षा की गई है। फिर कारणों और व्यवस्थागत कारकों के आधार पर सामाजिक समस्याओं के वर्गीकरण का भी प्रयत्न किया गया है। सामाजिक समस्याएँ सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैधानिक और पारिस्थिकीय कारणों से हो सकती है। सामाजिक समस्याओं को पैदा करने वाले व्यवस्थागत कारक सामाजिक विघटन या व्यक्तियों के परिवर्तित व्यवहार के कारण हो सकते हैं। हमने सामाजिक समस्याओं के अध्ययन की विचारधाराओं के बारे में भी जाना है। अंत में सामाजिक समस्याओं के प्रति सामाजिक प्रतिक्रिया पर भी कुछ प्रकाश डाला गया है।

1.10 शब्दावली

मानकीय (नॉर्म्स) : आचरण के वे नियम जो बताते हैं कि समाज में कैसे व्यवहार करना चाहिए। ये समाज द्वारा निर्धारित व्यवहार के स्थापित मानक होते हैं। ये आदर्श नियम होते हैं।

मूल्य (वैल्यू) : समाज में सामूहिक रूप से समझे जाने वाले अच्छा, बुरा, वांछनीय और उपयुक्त या बुरा अवांछनीय और अनुपयुक्त अनुभव ये उच्चस्तरीय आदर्श नियम होते हैं।

दुष्क्रिया (डाईस्फेक्शन) : किसी कार्य या घटना के वे परिणाम जो समाज की कार्य प्रणाली एकता और स्थिरता पर विपरीत प्रभाव डालते हैं।

औद्योगिकीकरण (इंडस्ट्रीयलाइजेशन) : कृषि समाज को मुख्यतः वस्तु उत्पादन के औद्योगिक रूप में वह परिवर्तन जो समाज की अन्य संस्थाओं में व्यापक परिवर्तन कर देता है।

शहरीकारण (अर्बेनाइजेशन) : ग्रामीण आबादी का शहरी स्थानों में स्थानांतरण

जनसंख्या विस्फोटन (पोपुलेशन एक्सप्लोशन) : जनसंख्या में शीघ्र एवं तीव्र वृद्धि ने पूरे विश्व मखाद्यऔर अन्य संसाधनों की आपूर्ति के बारे में चिंता पैदा कर दी है। सुझाव दिया गया है कि निरंतर अनियोजित तीव्र वृद्धि विश्व में अनियंत्रित समस्याएँ उत्पन्न कर देगी क्योंकि संसाधनों का और अधिक अभाव हो जाएगा।

पितृसत्ता (पैट्रीयारिकी) : ऐसा समाज जिसमें पारिवारिक निर्णय करने में पुरुष का प्रभुत्व होने की आशा की जाती है।

पारिस्थिकीय संतुलन (इकोलाजिकल बैलेंस) : उस स्थिति का द्योतक है जहां पर्यावरण व्यक्ति या प्राकृतिक कारकों के द्वारा किए परिवर्तनों को समायोजित करने में असमर्थ है।

जैव असादृश्य (बायोडाइवर्सिटी): पौधों और पशुओं के सभी जैविक जीवों का कुल योग जिसमें भूमि और पर्यावरण के सूक्ष्मतम जैविक जीव शामिल हैं।

सामाजिक अव्यवस्था (सोसयल डिसआर्गेनाजेशन) : बाहरी तथा आंतरिक कारणों से भी जब सामाजिक व्यवस्थाया उसकी गतिविधियों में अव्यवस्था हो जाए तो उसे सामाजिक अव्यवस्था कहा जाता है।

असामान्य व्यवहार (डिवियेंट बिहेवियर) : जब कभी सामान्यतः स्वीकृत 'सामान्य होने का विचार' किसी के व्यवहार विपरीत हो तो उसे परिवर्तित व्यवहार कहा जाता है। इसमें गंभीर अपराध और नैतिक संहिता का उल्लंघन शामिल है।

1.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

आहुजा राम (1992), *सोशल प्रोबलम्स इन इंडिया,* रावत पब्लिकेशस, जयपुर

केनेथ हेंरी (1978), *सोशल प्रोबलम्सः इंस्टिच्यूशनेल एंड इंटरपर्सनल पर्सपेक्टिविज,* स्कोट, फोपर्समैन एंड कंपनी, इलीनोइस, लंदन

मेर्टोन, रॉबर्ट के एंड निस्बेर रॉबर्ट (1971), *कंटेम्प्रेरी सोशल प्रोबलम्स,* फोर्थ एडिसन, हरकोर्ट ब्रास एंड कं., न्यूयार्क

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न I

1) सामाजिक समस्याएँ समाज की सामान्य कार्य प्रणाली में व्यवधान पैदा करने वाली स्थितियाँ होती है। ये समाज के नियमों और मूल्यों के उल्लंघन से उत्पन्न होती हैं। उदाहरण के लिए नशे की आदत, आतंकवाद और युवा असंतोष।

2) सामाजिक समस्याएँ बहुआयामी होती है। वे विभिन्न कारणों जैसे सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक या पर्यावरण के कारण हो सकती हैं। फिर सामाजिक समस्याओं का अवबोधन समय और स्थान के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। इसके अतिरिक्त, इसका विभिन्न लोगों पर भिन्न–भिन्न प्रभाव होता है। इसलिए सामाजिक समस्याओं को परिभाषित करना कठिन है।

3) सभी सामाजिक समस्याओं के समाज के लिए हानिकारक परिणाम होते हैं। वे आदर्श स्थिति से भिन्न होते है। इनके अनेक कारण हो सकते हैं। इनके मूल समाज में ही होते हैं। ये परस्पर संबद्ध होती हैं। इनका समाज के सभी सदस्यों पर प्रभाव पड़ता है। तो भी विभिन्न व्यक्तियों पर प्रभाव भिन्न–भिन्न होता है।

4) सम–सामयिक रूप से भारत की कुछ समस्याएँ हैं– आतंकवाद, हिंसा, महिलाओं, बच्चों और अल्पसंख्यकों के प्रति अपराध, बेरोज़गारी, गरीबी, नशे की आदत, संप्रदायवाद, युवा असंतोष, भ्रष्टाचार, स्थानांतरण एवं विस्थापन, पर्यावरणीय विकार, जनसंख्या वृद्धि, वेश्यावृत्ति, एचआईवी/एड्स आदि। ये समस्याएँ विभिन्न कारणों से हैं जिनमें आर्थिक, राजनीतिक, वैधानिक व सांस्कृतिक तथा साथ ही ऐतिहासिक कारक भी शामिल हैं।

बोध प्रश्न II

1) सामाजिक समस्याओं के सामाजिक कारक हैं उदाहरण के लिए विभिन्न धर्म, जाति, भाषा समूहों एवं जन–जातीय समूहों के बीच संघर्ष। इनके सांस्कृतिक कारण भी हैं जैसे लड़कों को प्राथमिकता, पैतृक परिवार व्यवस्था, तथा सार्वजनिक संपत्ति के प्रति सम्मान का अभाव।

2) सामाजिक समस्याएँ प्राकृतिक (पारिस्थितिक) कारकों जैसे पर्यावरण प्रदूषण (वायु, जल, भूमि और शोर) सार्वभौमिक ताप वृद्धि तथा जैव संरचना को खतरा आदि।

3) सामाजिक समस्याएँ सामाजिक विघटन से भी उत्पन्न होती हैं जैसे प्रभावशाली संस्थागत कार्यप्रणाली भंग होना, पारिवारिक विघटन, विवाह विच्छेद, गरीबी, हिंसा, अपराध, जनसंख्या वृद्धि और सामुदायिक विघटन जैसे युवा असंतोष।

बोध प्रश्न III

1) सामाजिक समस्याओं का समसामयिक अपबोधन पूर्वकालीन अवबोधन से भिन्न हैं। पहले सामाजिक समस्याएँ और उनके स्रोत की व्याख्या वैयक्तिक विकृति विज्ञान के दृष्टिकोण से की जाती थी। समस्या का कारण व्यक्ति की जैविक संरचना में देखा जाता था तथा उसका ठीक होना असंभव माना जाता था। आज सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक या संरचनात्मक तथ्यों पर जोर दिया जाता है। इस प्रकार सम–सामयिक दृष्टिकोण सामाजिक समस्या के कारण पर वैयक्तिक स्तर की अपेक्षा सामूहिक स्तर पर विचार करती है।

2) सामाजिक समस्याओं के अध्ययन का महत्वपूर्ण दृष्टिकोण हैं प्रकार्यात्मक, मार्क्सवादी तथा गांधीवादी।

3) सामाजिक समस्या अध्ययन का गांधीवादी दृष्टिकोण अन्य दृष्टिकोणों से भिन्न है क्योंकि यह सत्य और अहिंसा के मूल्यों पर आधारित है। यह समाज के एक समाज संगठन के रूप में देखती हैं और समाज की मुख्य विशेषता के रूप में संघर्ष की अपेक्षा सहयोग पर जोर देती है। गांधीवादी दृष्टिकोण के अनुसार समाज को हिंसा या कानून की अपेक्षा स्वयं अपनी पहल और प्रयत्नों से परिवर्तित होना चाहिए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2 सम–सामयिक सामाजिक समस्याएँ–I

रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 एचआईवी/एड्स

2.3 पर्यावरणी विकार

2.4 युवा असंतोष

2.5 भ्रष्टाचार

2.6 स्थानांतरण और विस्थापन

2.7 सारांश

2.8 शब्दावली

2.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको वर्तमान में देश की विभिन्न सामाजिक समस्याओं के बारे में अवगत कराना है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- सामाजिक समस्याएं जैसे एचआईवी/एड्स, स्थानांतरण एवं विस्थापन/पर्यावरणी विकार, सांप्रदायिकता, युवा असंतोष और भ्रष्टाचार के व्यवस्थागत कारण और विश्लेषण की चर्चा कर सकेंगे; और
- इन सामाजिक समस्याओं के समाधान के विभिन्न मध्यस्थ–उपायकारी, वैधानिक, सरकारी तथा गैर–सरकारी माध्यमों के बारे में चर्चा कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम भारत में होने वाली कुछ सामान्य समस्याओं के बारे में चर्चा कर रहे हैं। बाकी बची हुई समस्याओं के बारे में हम अगले अध्याय में विचार करेंगे। हाल के दिनों में एच. आई. वी/एड़स, साम्प्रदायिकता, युवा असंतोष, भ्रष्टाचार और विस्थापना जैसी समस्याओं पर अत्यधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। कोई भी व्यक्ति यह कह सकता है कि ये समस्याएँ भारत जैसे विकास शील समाज से जुड़ी हैं जिनका होना स्वाभाविक है। इसलिए इस तरह की समस्याओं पर विशेष ध्यान क्यों दिया जाए। इन समस्याओं से संबंधित समाधान पर विशेषकर सरकार की ओर से की गई प्रतिक्रिया पर खास चर्चा की जाएगी।

2.2 एचआईवी/एड्स

एड्स (एक्वायर्ड इम्यूनो–डिफेसिएंसी सिंड्रोम) एक रोग है जो ह्यूमैन इम्युनोडिफेसिएंसी वायरस या एचआईवी नामक वायरस से फैलता है। वायरस में एड्स संक्रमण की अंतिम अवस्था है। एचआईवी से संक्रमण होने के बाद एड्स होने में आठ से दस वर्ष का समय लगता है। एड्स के उपचार या लोगों को एचआईवी से बचाने के लिए कोई टीका अभी तक विकसित नहीं हो पाया है।

विस्तारः 2001 के अंत में डब्ल्यूएचओ (विश्व स्वास्थ्य संगठन) तथा यूएन एड्स ने अनुमान व्यक्त किया कि विश्व में लगभग 40 मिलियन/चार करोड़ व्यक्ति एचआईवी से पीड़ित हैं। अनुमान लगाया गया है कि 50 लाख नए व्यक्ति एचआईवी संक्रमण से और जुड़ गए है तथा एड्स से 30 लाख लोगों की मृत्यु हुई है। नए संक्रमणों में 8 लाख 15 वर्ष से कम आयु के बच्चे तथा 20 लाख महिलाएं थी। 1981 में एड्स के प्रथम चिकित्सीय साक्ष्य मिलने के बाद से 36 लाख बच्चों सहित लगभग 2.5 करोड़ लोग एड्स से मारे जा चुके हैं।

भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) ने एचआईवी संक्रमण पर भारत में 1985 के अंत में नजर रखना आरंभ किया।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) ने 1994 में इस महामारी के प्रवाह को मॉनीटर करने के लिए देश में 55 स्थानों पर 'अनलिंक्ड एनोनिमस सेंटीनैल सर्विलियंस' (ज्ञात अज्ञात पहरेदारी निगरानी) रखना आरंभ किया। 2001 के अंत तक संपूर्ण देश में पहरेदारी निगरानी के आधार पर नाको ने अनुमान व्यक्त किया कि भारत में लगभग 31 लाख व्यक्ति एचआईवी/एड्स से पीड़ित है। 2001 के इन अनुमानों ने संकेत दिया कि 15.49 आयु वर्ग में कम से कम 0.8% लोग इससे संक्रमित थे।

अत्यधिक जोखिम समूह और वायरस संप्रेषण मार्ग

मुख्यतः एचआईवी चार मार्गों से फैलता है :

1) संक्रमित समलैंगिक तथा भिन्न लैंगिक साथी के साथ सहवास करने से
2) एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के रक्त और रक्त उत्पाद चढ़ाने से
3) संक्रमित सीरिंज या सूई से ड्रग्स का इंजेक्शन लेने से और
4) संक्रमित माता से जन्म पूर्ण बच्चे में संप्रेषण से

पूणे में एक अध्ययन में पाया गया कि एचआईवी के 80 प्रतिशत मामले स्वच्छंद लैंगिक संभोग, 5 प्रतिशत रक्त चढ़ाने तथा 4 प्रतिशत संक्रमित सूई से ड्रग्स के इंजैक्शन लगाने से संबंधित थे।

इस प्रकार वायरस संप्रेषण के सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत हैं :

1) **वेश्यावृति** : एक अनुमान के अनुसार मुंबई में 1989 से 1991 के बीच 3 वर्ष में ही वेश्याओं में एचआईवी संक्रमण का स्तर एक प्रतिशत से बढ़ कर तीस प्रतिशत तक हो गया।

2) **समलैंगिकता** : यद्यपि भारतीय अपराध संहिता के अंतर्गत समलैंगिकता अभी भी एक अपराध है तो भी दीर्घकाल से प्रचलित यह वर्जना अब टुटने लगी है। इसलिए समलैंगिकता के माध्यम से एचआईवी संक्रमण का खतरा बढ़ गया है।

3) **नशे की आदत** : जो लोग इंजैक्शन के द्वारा नशा करते है उनमें संक्रमित सूई के माध्यम से एचआईवी संक्रमण फैलने का खतरा रहता है।

4) **रक्त दाता** : कुछ व्यावसायिक रक्तदाता होते हैं जिनके रक्त में कभी एचआईवी होता है। जब बिना उपयुक्त परीक्षण के उनका रक्त रोगियों में चढ़ाया जाता है तो उनमें एचआईवी संचरित हो जाता है। इसी प्रकार प्रयोगशालाएं भी जब बिना वैज्ञानिक परीक्षण के रक्त की आपूर्ति करती है तो एचआईवी संचरित हो जाता है।

5) **गर्भवती महिलाएँ** : एचआईवी युक्त गर्भवती महिलाओं का उनके नवजात शिशु में वायरस संचरित हो जाता है।

6) **ब्लेड** : हजामत के लिए प्रयोग किए जाने वाले ब्लैड विशेषकर नाइयों के द्वारा प्रयोग किए जाने वाले ब्लेडों से एचआईवी फैलने का खतरा रहता है।

निहितार्थ : एड्स केवल एक स्वास्थ्य समस्या नहीं है; इसमें महत्वपूर्ण सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक समस्याएं भी निहित है।

संक्रमित की देखभाल करना : सरकार ने एचआईवी/एड्स के गंभीर परिणामों को माना है तथा इस महामारी के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की है।

वर्तमान में भारत सरकार राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम (एनएसीपी II, 1999–2004) का दूसरा चरण लागू कर रही है। एनएसीपी II का विकास भारत सरकार, राज्य सरकारों, एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्तियों, द्विपक्षीय साथियों, सामुदायिक सदस्यों, औद्योगिक और श्रमिक संगठनों तथा सिविल समाज के साथ सलाह और विचार–विमर्श से किया गया। इसके पांच मुख्य तथ्य है :

i) उच्च जोखिम वाले समुदायों के लिए लक्ष्य मध्यस्थ

ii) आम जनता में एचआईवी संचरन की रोकथाम

iii) कम लागत वाली देखभाल एवं सहारे का प्रावधान

iv) संस्थागत क्षमताओं को मजबूत बनाना, और

v) पारस्परिक त्रिपक्षीय योगदान

एनएसीपी II के मुख्य उद्देश्य हैं :

1) भारत में एचआईवी के प्रसार को रोकना; और

2) एचआईवी/एड्स महामारी के प्रति अनेक क्षेत्रों, गैर सरकारी संस्थाओं तथा अन्य सिविल समाज कार्यकर्ताओं के सहयोग से दीर्घकालीन आधार पर प्रतिक्रिया कर भारत की क्षमताओं को मजबूत बनाना।

स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

स्वैच्छिक संगठन बीमारी के संपर्क में आने के खतरे वाले लोगों के बारे में सूचनाएं तथा सेवाएं एवं अन्य सामाजिक सहारे के साधन प्रदान कर सकते हैं। वे संक्रमण के संपर्क में आने से पूर्व लोगों को एचआईवी संक्रमण प्रसार के बारे में समुदाय आधारित कार्यकर्त्ताओं के माध्यम से ज्ञान प्रदान कर सकते है। रोगियों की सहायता करने के अतिरिक्त स्वैच्छिक संगठन एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्तियों या संक्रमित बच्चों, परिवारों और अन्य आश्रित सदस्यों को एकान्त एवं पक्षपात का शिकार बनने से बचाने में भी सहायता कर सकते हैं।

एड्स के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए हमारे देश में राशि प्राप्त करना एक गंभीर समस्या है क्योंकि संभावित लागत अत्यधिक है।

2.3 पर्यावरणी विकार

पर्यावरणी विकार को मौटे तौर पर दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है :–

1) **गंभीर घटनाएँ एवं जोखिम** : ऐसी घटनाएँ या तो प्राकृतिक प्रक्रियाओं अथवा मानवीय कारणों से होती है जिनसे पर्यावरण में तुरंत परिवर्तन होता है और वे हमारे पर्यावरण को क्षति और हानि पहुंचाती है। इन्हें पुनः दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है:

i) प्राकृतिक जोखिम (प्राकृतिक कारकों के कारण)

क) **क्षेत्रीय,**

– भू–सतह पर होने वाली

– अंतर्जातीय कारकों के कारण होने वाली

– ज्वालामुखी फूटना, भूकंप, जलप्लावन, आदि

ख) **वातावरणीय** : चक्रवात, आकाशीय विद्युत

ग) **संचयी वातावरणीय** : ये निरंतर कई वर्षों तक कुछ वातावरणीय घटनाओं के संचित प्रभावों के कारण उत्पन्न होती है जैसे बाढ़ एवं सूखा।

2) **मानव प्रेरित जोखिम**

क) **भौतिक जोखिमः** भू–स्खलन, दावानल

ख) **रासायनिक जोखिमः** विषैली गैसों का रिसाव, आण्विक विस्फोट

ग) **जैवीयः** जातियों में वृद्धि या कमी होना, जनसंख्या में तीव्र वृद्धि

3) **मानव रहित कारणों से जैविक जोखिमः** जैसे टिड्डी दल और महामारियाँ

प्रदूषणः मानव गतिविधियों के कारण असीमित पर्यावरणीय गुणता में विकार

क) **भूमि प्रदूषणः** भूमि कटाव, बंजरता और खारापन

ख) **जल–प्रदूषणः** समुद्री जल प्रदूषण, नदी प्रदूषण, तथा भू–जल प्रदूषण

ग) **वायु प्रदूषणः** ओजोनपर्त में छिद्र होना, ग्रीन हाऊस गैसे (जहरीली गैसें) हवा में तैरते कण।

पर्यावरणीय विकार पैदा करने वाले कुछ महत्वपूर्ण कारक इस प्रकार है :

1) **वन कटाईः** तेज़ी से भूमि कटाव, नदियों में तलछट बढ़ना, तालाबों में गाद भरना, बार–बार सूखा और बाढ़ आदि आना। वर्षा के स्वरूप एवं वितरण में परिवर्तन, ग्रीन हाऊस के प्रभावों में वृद्धि, वातावरणीय तुफान की विध्वंसकारी ताकतों में वृद्धि आदि।

2) **कृषि विकासः** कृषि भूमि में विकास और व्यापक वन कटाई। कृषि भूमि की उत्पादकता में वृद्धि करने की आवश्यकता और इस प्रकार कीट नाशकों, जीवाणु नाशकों, उर्वरकों, सिंचाई आदि के उपयोग द्वारा गहन खेती करने से अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाती है जैसे पोषक तत्त्वों की कमी, भूमि में संदूषण, भूमि की बंजरता, प्रदूषण और भू–जल की कमी आदि।

3) **जनसंख्या वृद्धिः** इससे औद्योगिक विस्तार, कृषि विकास और शहरी आबादी में वृद्धि होती है। मांग में वृद्धि से प्राकृतिक संसाधनों का तेजी से दोहन होता है इससे पर्यावरणीय गुणता में कमी तथा पर्यावरण में असंतुलन होता है।

4) **औद्योगिक विकासः** यद्यपि इस आर्थिक संपन्नता में तो वृद्धि हुई है तो भी इसके परिणाम अवांछनीय परिणामों के माध्यम से पर्यावरण में विकार पैदा करते हैं जैसे औद्योगिक अपशिष्ट, प्रदूषित जल, विषैली गैसे, भस्म, तथा खनन के माध्यम से भूमि का बंजर होना आदि।

5) **विस्तृत शहरीकरणः** विस्तृत शहरीकरण का अर्थ है कि सीमित स्थान विशेषों पर मानवीय आबादी का केन्द्रीयकरण। इसके फलस्वरूप भवनों, सड़कों और गलियों, नालियों और बड़े नालों, उद्योगों तथा औद्योगिक कचरा तथा शहरी कचरे आदि में व्यापक वृद्धि हो जाती है जिनसे पर्यावरणीय विकार पैदा होते हैं।

6) **आधुनिक तकनीकः** आधुनिक तकनीके पूर्ववर्ती तकनीकों से अधिक विध्वंसकारी है। इनका उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की गति बढ़ाना तथा मनुष्यों के भौतिक स्तर को ऊंचा करने के लिए उत्पाद बनाना है। फिर भी, ये प्रक्रियाएं उत्पादन वृद्धि के पर्यावरण स्वरूप के विरूद्ध चलती है। जैसे, कृषि में ऊर्वरकों, कीटनाशकों एवं जीवाणु नाशकों का प्रयोग करना। आणविक तकनीक का प्रयोग, जीवाश्म ईंधन आदि को जलाना।

संरक्षण के उपाय

1) पर्यावरणी विकार के कारकों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है जनसंख्या में वृद्धि। इसलिए पर्यावरणी विकार को नियंत्रित करने के लिए एक महत्वपूर्ण उपाय है जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण करना। अन्य उपाय इस प्रकार है :

2) प्रदूषण मुक्त तकनीकों का विकास करना

3) प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को कम करना

4) वन कटाई को वनस्थापन और पुनः वानिकी के माध्यम से भरपाई के बड़े पैमाने पर गंभीर प्रयत्न करना।

5) रासायनिक उर्वरकों, कीट नाशकों और जीवाणु नाशकों का उपयोग सीमित करना तथा जैविक उर्वरकों का उपयोग बढ़ाना।

6) उन मदों के उपयोग को सीमित करना (जैसे रेफ्रीजरेटर, वातानुकूलन आदि) जो ओजोन पर्त को नुकसान पहुंचाने वाली गैसे छोड़ते हैं जैसे क्लोरोफ्लोरो कार्बन (सीएफसी)

7) ग्रीन हाऊस गैसे जैसे (सीओ$_2$) के रिसाव को कम करने के लिए हाइड्रोकार्बनों के प्रयोग को सीमित करना।

8) भूमि कटाव के कारण धंसी हुई जमीन को भरना।

9) आणविक शस्त्रों का प्रयोग बंद करना।

10) लोगों को पर्यावरण के बारे में शिक्षित करना।

इस मामले को पर्यावरण विचलन और संतुलन के बारे में पर्याप्त जागरूकता प्रदान कर सुलझाया जा सकता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी सहयोग की आवश्यकता को अनुभव किया जाना आवश्यक है क्योंकि ये समस्याएं राष्ट्रीय सीमाओं को पार कर चुकी है और वर्तमान में अंतर्राष्ट्रीय प्रयास (मोंटिरियल प्रोटोकोल, क्योटो प्रोटोकोल आदि) पर्यावरण परिवर्तन, स्थाई विकास की संकल्पना आदि से निपटने का प्रयास कर रहे हैं।

बोध प्रश्न I

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) एचआईवी प्रसार के स्रोत क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) पर्यावरणीय विकार के महत्वपूर्ण कारण क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2.4 युवा असंतोष

युवा असंतोष को "समाज में युवा वर्ग की सामुहिक कुंठा की अभिव्यक्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है" इसकी अभिव्यक्ति तब होती है जब वे समाज में मौजूद नियम इस सीमा तक अप्रभावी या हानिकारक मानते है कि वे उन्हें अविश्वसनीय और घृणित मानने लगते है और इन नियमों को परिवर्तित करना आवश्यक समझते हैं।

युवा असंतोष की विशेषताएँ

उपरोक्त परिभाषा के आधार पर युवा असंतोष की निम्नलिखित विशेषताएं बताई जा सकती हैं :

i) सामुहिक असंतोष

ii) दुष्क्रिया की स्थिति

iii) जन सरोकार और

iv) विद्यमान नियमों में परिवर्तन की आवश्यकता

युवा आंदोलनः युवा आंदोलन युवाओं के व्यवहार हैं जिनका उद्देश्य सामाजिक विरोध करना है। इनका उद्देश्य किसी व्यक्ति को घायल करना या सार्वजनिक संपत्ति को हानि पहुँचाना नहीं है। युवा आंदोलनों के विभिन्न रूप है– प्रदर्शन करना, नारे लगाना, हड़ताल करना, भूख हड़ताल करना, मार्ग में अवरोध खड़े करना, और परीक्षाओं का बहिष्कार करना। युवा आंदोलनों की पूर्व स्थितियां हैं :

i) संरचनात्मक दबाव

ii) दबाव स्रोतों की पहचान

iii) नेतृत्व कार्य में प्रेरणात्मक तथ्य

युवा असंतोष के महत्वपूर्ण कार्य हैः

i) सामूहिक चेतना जागृत करना तथा सामूहिक एकता स्थापित करना

ii) नए कार्यक्रम और नई योजनाएं लागू करने के लिए युवाओं को संगठित करना

iii) अपनी भावनाएँ अभिव्यक्त करने के लिए और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में कुछ प्रभाव छोड़ने के लिए युवाओं को अवसर प्रदान करना।

युवाओं के आंदोलन युवा उत्तेजना को महत्वपूर्ण आयाम प्रदान करते हैं। इन आंदोलनों को इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है :

i) छात्र आधारित आंदोलन और

ii) समाज आधारित आंदोलन

पहले प्रकार के आंदोलन महाविद्यालय/विश्वविद्यालय स्तर पर और राष्ट्रीय स्तर की समस्याओं से संबंधित है जबकि दूसरे प्रकार के आंदोलन राज्य/देश की राजनीति और कार्यक्रमों में छात्रों की रुचि दर्शाते हैं। छात्र आधारित आंदोलन प्रायः मूल्य आधारित न होकर असतत और समस्या आधारित होते हैं।

युवा असंतोष जनित आंदोलन की उत्पत्ति की प्रक्रिया

अनेक युवा आंदोलन एक प्रकार की जीवन शैली का पालन करते हैं जिसकी निम्नलिखित अवस्थाएं होती है :

i) असंतोष की अवस्था–यह असंतुष्टि की स्थिति होती है जिसमें विद्यमान परिस्थितियों से भ्रम उत्पन्न होता है।

ii) आरंभिक अवस्था–इसमें कोई नेता प्रकट होता है और असंतोष के कारणों की पहचान की जाती है। उत्तेजना में वृद्धि होती है तथा कार्रवाई के प्रस्ताव पर चर्चा होती है।

iii) औपचारिक अवस्था–उसमें कार्यक्रम बनाए जाते हैं, साथियों को पक्का किया जाता है और बाहरी कार्यकर्त्ताओं से समर्थन प्राप्त किया जाता है।

iv) जनसमर्थन अवस्था–इसमें युवा समस्याओं को जन–समस्या में रूपांतरित किया जाता है। इससे जनता में न केवल जागरूकता आती है अपितु संबंधित विषय पर जन समर्थन भी प्राप्त किया जाता है।

युवा वर्ग जन समर्थन प्राप्त करने में वहाँ असफल हो जाते हैं जहाँ :

क) दावा अत्यधिक अस्पष्ट हो

ख) ध्यान आकर्षित करने के लिए विषय दमदार न हो

ग) विषय को अनुचित रूप से प्रस्तुत किया गया हो

घ) दावों पर दबाव डालने के लिए युवाओं द्वारा अप्रभावी कार्यनीतियाँ अपनाई गई हों और

ङ) दूसरे स्वार्थ समूहों द्वारा विरोध किया जा रहा हो।

v) औपचारिक कार्य अवस्था में सत्तारूढ़ एजेंसियाँ विषय के महत्व को अनुभव करती है, औपचारिक रूप से असंतोष को मान्यता प्रदान करती है और मामले को हल करने के लिए कार्यनीति अपनाने के लिए सहमत हो जाती है।

युवा असंतोष और आंदोलन के कारण

1960 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित समिति ने छात्र आंदोलनों के निम्नलिखित कारणों का पता लगाया :

1) आर्थिक कारण जैसे शिक्षा शुल्क कम करना, छात्रवृत्ति में वृद्धि करना।

2) प्रवेश, परीक्षाओं और शिक्षण के विद्यमान नियमों में परिवर्तन की मांग करना।

3) महाविद्यालयों/विश्वविद्यालयों की दोषपूर्ण कार्यप्रणाली जिसमें प्रयोगशालाओं के लिए रासायनिक पदार्थ और उपकरण या पुस्तकालयों के लिए पुस्तकें और पत्रिकाएं आदि न खरीदना।

4) छात्रों और शिक्षकों के बीच मतभेदपूर्ण संबंध (शिक्षकों पर प्रायः कक्षाएं छोड़ने तथा शिक्षण के प्रति प्रतिबद्ध न होने का आरोप लगाया जाता है)

5) परिसर में अपर्याप्त सुविधाएं जैसे अपर्याप्त छात्रावास, छात्रावासों में घटिया भोजन, जलपान गृहों की कमी तथा स्वच्छ पेयजल सुविधाओं का अभाव और

6) राजनीतिज्ञों द्वारा छात्र नेताओं को भड़काना।

युवा आंदोलनों पर नियंत्रण

वयस्क समाज को यह मानना होगा कि युवाओं की समस्याओं को उनके साथ मिलकर ही हल की जा सकती है। इसलिए, अभिभावकों, शिक्षकों तथा प्रशासन अधिकारियों द्वारा छात्रों/युवाओं का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक है। युवा/छात्रों, अभिभावकों, शिक्षकों और शिक्षण अधिकारियों, राजनीतिज्ञों और राजनीतिक दलों को युवाओं की समस्याएं/परेशानियां समझने में सहयोग करना चाहिए तथा उन्हें तर्क संगत मार्ग दर्शन प्रदान करना चाहिए।

अब समय आ गया है कि अब तक उपेक्षित एवं अनदेखी की गई व्यापक युवा शक्ति को विकास, सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय लक्ष्य प्राप्त करने के लिए काम में लगाया जाए।

बोध प्रश्न II

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) सांप्रदायिकता प्रसार की रोकथाम में मीडिया कैसे सहायता कर सकता है?

.....

.....

.....

.....

2) जन समर्थन प्राप्त करने में युवा आंदोलन कब असफल होता है?

.....

.....

.....

.....

2.5 भ्रष्टाचार

साधारण शब्दों में भ्रष्टाचार 'रिश्वत का कार्य' के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसे "सरकारी अधिकार को निजी लाभ के लिए प्रयोग करने पर कानून का उल्लंघन होने या समाज के नियमों से विचलन होने" के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

समाज में भ्रष्टाचार कई रूपों में विद्यमान है। इनमें से सबसे अधिक है रिश्वतखोरीः (यह गैर कानूनी या बेइमानी पूर्ण कार्य को अपने पक्ष में कराने के लिए धन या उपहार या वस्तु के रूप में धन देना), भाई–भतीजावाद (अधिकार प्राप्त व्यक्ति द्वारा अपने संबंधियों की अनुचित सहायता करना), दुरूपयोग (दूसरों के धन को अपने हित के लिए प्रयोग करना), संरक्षण (संरक्षक द्वारा अनुचित सहायता/प्रोत्साहन देकर अपनी स्थिति का दुरूपयोग) तथा पक्षपात (किसी एक को दूसरे की अपेक्षा प्राथमिकता देना)

वैकल्पिक आर्थिक नीतियों के लिए आरंभिक समितिः इस समिति ने सौदों में काले धन के लेन–देन के बारे में कुछ अनुसंधान किया है। अनुमान किया जाता है कि यह राशि 1980.81 में 3036 करोड़ रुपये से बढ़ कर 1990.91 में लगभग 19,414 करोड़ रु. हो गयी अर्थात् एक दशक में राशि 6 गुना से अधिक हो गई।

भ्रष्टाचार निरोधक कानून, 1947 के अंतर्गत भारत में भ्रष्टाचार के पंजीकृत मामलों की संख्या 1981 और 1987 के बीच 300 से 520 के बीच रही। फिर भी, 1988 का अधिनियम लागू होने के बाद यह संख्या प्रतिवर्ष बढ़ कर 1800 से 2000 के बीच हो गई है। भ्रष्टाचार के पंजीकृत मामलों की संख्या 1988 में 1295ए 1993 में 1895 तथा 1994 में यह 1911 तक पहुँच गयी। कुल पंजीकृत मामलों में से 70 से 75 प्रतिशत मामलों में आरोप पत्र दाखिल किए गए। लगभग 2104 नए मामले अदालतों में लम्बित थे। 1994 में 1423 मुकदमों में से केवल 13.9 प्रतिशत मामलों में सजा की गई। ये आंकड़े देश में भ्रष्टाचार की तथा उनसे निपटने की स्थिति दर्शाते हैं।

भ्रष्टाचार के कारण

भ्रष्टाचार के निम्नलिखित अनेक कारणों का पता लगाया गया है :

क) विशिष्ट राजनीतिक वर्ग का उदय जो राष्ट्र आधारित कार्यक्रमों और नीतियों की अपेक्षा अपने हित पूरे करने में विश्वास करता है।

ख) सरकार द्वारा नियंत्रित नीतियों या मूल्यों के क्षेत्रों में हाल ही में हुए घोटाले स्वतः स्पष्ट कारण है।

ग) दुर्लभता के कारण होने वाला भ्रष्टाचार

घ) प्रशासन से जुड़े लोगों में मूल्यों और नैतिकता में परिवर्तन होने से भ्रष्टाचार की उत्पत्ति एवं वृद्धि होती है।

ङ) अक्षम प्रशासन में भी भ्रष्टाचार देखा जा सकता है। सतर्कता की कमी, नौकरशाही को असीमित अधिकार, उत्तरदायित्व निर्धारण का अभाव, दोषपूर्ण सूचना प्रणाली आदि जैसी स्थितियां कर्मचारियों को भ्रष्ट होने के न केवल अवसर प्रदान करती है, अपितु भ्रष्ट कार्य करते रहने के बावजूद उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

भ्रष्टाचार का प्रभाव

यह जानना महत्वपूर्ण है कि भ्रष्टाचार हमारे समाज को कई प्रकार से प्रभावित करता है।

1) इसने देश के आर्थिक विकास को बाधित किया है।

2) इसने समाज में हिंसा तथा कानून विहीनता पैदा की है क्योंकि भ्रष्टाचारी के पास धन की शक्ति होती है जो कानून लागू करने वाले को उसकी सेवा करने के लिए प्रभावित करती है।

3) इसके फलस्वरूप नैतिकताएं भंग होती है तथा व्यक्ति का चरित्र नष्ट हो जाता है।

4) इसने अक्षमता, भाई–भतीजावाद और अकर्मण्यता को बढ़ावा दिया है तथा प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में अनुशासन हीनता पैदा की है।

5) इससे देश में काले धन की वृद्धि हुई है।

6) इससे खाद्य पदार्थों में मिलावट, नकली औषधियाँ तथा अनेक उपभोक्ता वस्तुओं का अभाव हुआ है।

कानून

भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम 1988 में लागू किया गया। यह भ्रष्टाचार निरोधक कानून, 1947 के प्रावधानों, भारतीय दंड संहिता के कुछ अनुच्छेदों तथा आपराधिक अधिनियम, 1952 का समेकित स्वरूप है। इसका मुख्य उद्देश्य सभी संबंधित प्रावधानों को एक ही कानून के अंतर्गत लाना था। फिर 1988 का अधिनियम 'लोक सेवक' शब्द के दायरे को बड़ा करता है तथा इसमें अधिकाधिक कर्मचारियों को शामिल किया गया है।

भ्रष्टाचार निरोध के लिए किए गए उपाय

भारत सरकार ने भ्रष्टाचार रोकथाम के लिए 1960 में के. समथानम् की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया था। उसकी सिफारिशों में भ्रष्टाचार के विभिन्न पहलुओं को शामिल किया गया। इस समिति की सिफारिश के आधार पर केन्द्रीय सरकार तथा अन्य कर्मचारियों के विरूद्ध जांच के लिए 1964 में केन्द्रीय सतर्कता आयोग की स्थापना की गई।

केन्द्रीय सरकार ने भ्रष्टाचार निरोधक उपायों के रूप में निम्नलिखित चार विभागों की स्थापना की :

i) कार्मिक और प्रशिक्षक विभाग में प्रशासनिक सतर्कता प्रभाग (एवीडी)

ii) केन्द्रीय जाँच ब्यूरो (सीबीआई)

iii) मंत्रालयों/विभागों/सार्वजनिक उपक्रमों/राष्ट्रीयकृत बैंकों में घरेलू सतर्कता एकक और

iv) केन्द्रीय सतर्कता आयोग (सीबीसी)

2005 में, सूचना का अधिकार अधिनियम (आर.टी.आई.) ने काफी हद तक भ्रष्टाचार कम कर दिया और इसके मूल हेतु उसको ही दुरुस्त करने के लिए जागरूकता उत्पन्न की। भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए कई संगठन बनाए गए।

2.11.2012 में भ्रष्टाचार के विरुद्ध भारत एक प्रसिद्ध आंदोलन था। अन्ना हजारे, अरविन्द केजरीवाल और किरण बेदी इसके चर्चित चेहरे थे।

इसके बावजूद भ्रष्टाचार की रोकथाम का एक प्रभावी तरीका यह हो सकता है कि राजनीतिक दलों को सद्भावना से चुनावी राशि उपलब्ध कराई जाए या केन्द्रीय सरकार एक चुनावी कोश से चुनावों में खर्च करे। यह व्यवस्था जर्मनी, नार्वे, एवं स्वीडन तथा यूरोप के कई विकसित देशों में लागू है।

2.6 स्थानांतरण और विस्थापन

जनसांख्यिकीय शब्द कोश के अनुसार, "स्थानांतरण भौगोलिक गतिशीलता या स्थानीक गतिशीलता है जो एक भौगोलिक इकाई से दूसरी भौगोलिक इकाई के बीच होती है। जिसमें प्रायः मूल स्थान या प्रस्थान स्थान के आवास से लक्ष्य या पहुंचने के स्थान में परिवर्तन होता है।" ऐसे स्थानांतरण को स्थाई स्थानांतरण कहा जाता है और हमें स्थानांतरण के अन्य रूपों जिनमें आवास का स्थाई परिवर्तन नहीं होता, से अंतर करना चाहिए।

रूप / प्रकार

आंतरिक स्थानांतरण का अर्थ है देश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना। जबकि बाहरी या अंतर्राष्ट्रीय स्थानांतरण का अर्थ है एक देश से दूसरे देश में जाना।

भारत में स्थानांतरण करने वालों को चार शाखाओं में विभाजित किया जाता है जैसे :

क) गाँव से गाँव को

ख) गाँव से शहर को

ग) शहर से शहर को

घ) शहर से गाँव को

अवधि के आधार पर अन्य प्रकार का स्थानांतरण विभाजन दीर्घावधि स्थानांतरण तथा अल्पावधि या मौसमी स्थानांतरण है। इन दो महत्वपूर्ण प्रकारों के अलावा अन्य प्रकार के स्थानांतरण स्वैच्छिक या अस्वैच्छिक अथवा बलात् योग्यता निर्गम (युवा कुशल व्यक्तियों का स्थानांतरण) और शरणार्थी एवं विस्थापित व्यक्तियों का स्थानांतरण हो सकते हैं।

विशेषताएँ

एक महत्वपूर्ण विशेषता है स्थानांतरण करने वालों की आयु चयनात्मकता होना। अधिकांश स्थानांतरण अध्ययन में पाया गया है कि गाँवों से शहरों में स्थानांतरण करने वालों में मुख्यतः मूल स्थान पर रहने वालों की अपेक्षा नवयुवक और अधिक शिक्षित लोग होते हैं।

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि स्थानांतरण करने वाले या प्रवासी लोगों की प्रवृति उन स्थानों पर जाने की होती हैं जहां उनके संपर्क होते हैं और जहाँ पिछले प्रवासी लोगों ने नए प्रवासी लोगों के लिए संपर्क का कार्य किया है। कुछ मामलों में प्रवासी लोगों की इच्छा न केवल वही स्थान प्राप्त करने की होती है अपितु वे कार्य भी वही करना चाहते हैं। उदाहरण के लिए अनुसंधान से ज्ञात हुआ कि जयपुर के कुछ होटलों में लगभग सभी कर्मचारी कुमांऊ के एक विशेष क्षेत्र से हैं तथा पंजाब और हरियाणा में कृषि श्रमिक मुख्यतः पूर्वी उत्तर प्रदेश से हैं।

स्थानांतरण के कारण

स्थानांतरण के महत्वपूर्ण कारणों को चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है– आर्थिक कारण, जनसांख्यकीय कारण, सामाजिक सांस्कृतिक कारण और राजनीतिक कारण।

आर्थिक

स्वैच्छिक स्थानांतरण का मुख्य कारण आर्थिक है। अधिकतर विकासशील देशों में अल्प कृषि आय, कृषि बेरोजगारी और अल्प रोज़गार ऐसे कारण है जो अपेक्षाकृत अच्छी नौकरी

के अवसर वाले क्षेत्रों में प्रवासियों को स्थानांतरित होने के लिए बाध्य करते हैं। यहां तक कि जनसंख्या दबाव के फलस्वरूप उच्च–व्यक्ति–भूमि अनुपात भी निर्धनता तथा गांव से शहरी स्थानांतरण का एक महत्वपूर्ण कारण है। स्थानांतरण को प्रेरित करने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारणों को 'धकेलना और खींचना' कारण कहा जा सकता है।

क) **धकेलने वाले कारणः** आइएलओ के एक अध्ययन से पता लगता है कि कृषि छोड़कर स्थानांतरण के लिए श्रमिक को धकेलने वाला एक मुख्य कारण है सभी स्तरों पर कम आय होना। ग्रामीण क्षेत्र में आय के अन्य वैकल्पिक स्रोत न होना भी स्थानांतरण का एक अन्य कारण है। यहाँ तक कि भूमि का उप विभाजन भी स्थानांतरण को प्रेरित करता है।

ख) **खींचने वाले कारणः** यह उन कारणों का द्योतक है जो प्रवासियों को आकर्षित करते हैं जैसे रोज़गार के अच्छे अवसर, अधिक मज़दूरी, अच्छी कार्य अवस्थाएँ और जीवन की अच्छी सुविधाएँ आदि उपलब्ध होना। हाल ही के वर्षों में भारत और अन्य विकासशील देशों से अमेरिका, कनाडा और अब मध्य एशिया को अत्यधिक संख्या में लोगों के स्थानांतरण के कारण अच्छे रोजगार अवसर और उच्चतर जीवन स्तर प्राप्त करना है।

पीछे धकेलने वाले कारणः भारत में स्थानांतरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला एक अन्य महत्वपूर्ण कारण है पीछे धकेलना। आशीष बोस के अनुसार, भारत में शहरी श्रमिक बल काफी अधिक है तथा शहरी बेरोज़गारी दर काफी अधिक है। यहाँ अल्प–रोज़गार श्रमिकों की भी अत्यधिक संख्या है। ये सभी कारण मिल कर गांव से शहरी क्षेत्रों में नए स्थानांतरण के प्रवाह को रोकते हैं। उन्होंने इसे पीछे "खींचने वाले कारण" कहा है।

सामाजिक–सांस्कृतिक एवं राजनीतिक कारक

इन धकेलने और खींचने वाले कारकों के अतिरिक्त सामाजिक और सांस्कृतिक कारक भी स्थानांतरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। परिष्कृत संचार सुविधाएं जैसे परिवहन, रेडियो और टेलीविजन, सिनेमा का प्रभाव शहरी शिक्षा और फलस्वरूप मनोवृत्ति और मूल्यों में परिवर्तन स्थानांतरण को बढ़ावा देते हैं। कभी–कभी पारिवारिक संघर्ष भी स्थानांतरण का कारण बनते हैं। वास्तव में राजनीतिक कारक भी स्थानांतरण प्रोत्साहित या हतोत्साहित कर सकते हैं। जैसे हमारे देश में राज्य सरकार द्वारा "भूमि पुत्रों के लिए नौकरियां नीति" अपनाने से अन्य राज्यों से स्थानांतरण पर निश्चित प्रभाव पड़ेगा।

स्थानांतरण के परिणामः स्थानांतरण के विभिन्न प्रकार के परिणाम इस प्रकार हैं:

1) **आर्थिकः** अतिरिक्त श्रमिक होने के कारण किसी क्षेत्र से उनके स्थानांतरण के फलस्वरूप उस क्षेत्र में श्रमिक की औसत उत्पादकता में वृद्धि होता है क्योंकि इससे श्रम बचाने वाले उपकरणों को प्रोत्साहन मिलता है और/या शेष बचे पारिवारिक सदस्यों द्वारा कार्य में और अधिक हाथ बटाया जाता है। दूसरी तरफ एक विचार यह भी है कि स्थानांतरण उत्प्रवास क्षेत्र अर्थात् जहाँ से लोग दूसरे स्थान पर जाते हैं वहां पर विपरीत प्रभाव डालता है और आप्रवासी अर्थात् वह स्थान जहां लोग पहुँचते हैं, पर इसका लाभ होता है। इसी प्रकार यह तर्क दिया जाता है कि स्थानांतरण क्षेत्रों के बीच विकास विसंगति को और बढ़ाता है अपेक्षाकृत अविकसित क्षेत्र से अधिक विकसित क्षेत्र में संपन्न व्यक्तियों के जाने से ऐसा होता है। फिर भी, श्रमिक प्रेषक क्षेत्रों को उत्प्रवासियों द्वारा लाए जाने वाले धन से आर्थिक लाभ हो सकता है।

2) **जनसांख्यकीयः** स्थानांतरण प्रेषक एवं पोषक क्षेत्रों में आयु, लिंग और व्यावसायिक संरचना पर स्थानान्तरण प्रत्यक्ष प्रभाव डालता है। युवा कार्यकारी आयु के अविवाहित

पुरुषों के स्थानांतरण से लिंग अनुपात में असंतुलन हो जाता है। इस प्रवृत्ति से ग्रामीण क्षेत्रों में जन्म दर में भी कमी आ जाती है।

3) **सामाजिक और मनोवैज्ञानिकः** शहरी जीवन शैली से प्रायः आप्रवासियों में कुछ सामाजिक परिवर्तन होते हैं। वे आप्रवासी जो कभी कभार लौटते हैं या अपने मूल स्थान के परिवार के साथ प्रत्यक्ष संपर्क में रहते हैं उनके भी वापिस अपने मूल क्षेत्रों में जाने पर कुछ नए विचारों को संप्रेषित करने की संभावना रहती है।

दूसरी तरफ स्थानांतरण के कारण दीर्घावधि तक वयस्क पुरुषों के बाहर रहने से परिवार भी विस्थापित हो सकते हैं। ऐसी परिस्थितियों में महिलाओं और बच्चों को प्रायः अधिक और विभिन्न प्रकार के कार्य करने पड़ते है तथा परिवार में महत्वपूर्ण निर्णय करने पड़ते हैं। अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि केरल से पुरुष स्थानांतरण के काफी हानिकारक प्रभाव हुए हैं। कहा जाता है कि केरल में उत्प्रवासी व्यक्तियों की पत्नियों में तंत्रिका रोग, हिस्टीरिया और विषाद रोगों में काफी वृद्धि हो गई।

बोध प्रश्न III

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) केन्द्रीय सतर्कता आयोग की स्थापना कब और किसकी सिफारिश पर हुई?

.....

.....

.....

.....

.....

2) स्थानांतरण के मुख्य सामाजिक सांस्कृतिक कारण क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2.7 सारांश

इस इकाई में हमने कई सामाजिक समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त की है। हमने देखा कि व्यापक तौर पर सामाजिक समस्याएँ सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैधानिक एवं पर्यावरण के कारणों से होती है। हमने यह भी देखा कि इन समस्याओं की रोकथाम में न केवल सरकार अपितु, अन्य सिविल सामाजिक संस्थाएँ भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

2.8 शब्दावली

सतत् विकास (सस्टेनेबल डवलप्मेंट) : पर्यावरण को हानि पहुँचाए बिना आर्थिक विकास; संसाधन दोहन और पर्यावरण प्रदूषण के सार्वभौमिक रूप से स्वीकार्य सीमा के अन्दर किया जाता है।

धर्मनिरपेक्षवाद (सेक्यूलेरिडम) : यह विश्वास की धर्म और धार्मिक संस्थाओं को राजनीति या नागरिक मामलों या सार्वजनिक संस्थाओं विशेषतः स्कूलों को चलाने में कोई भूमिका नहीं निभानी चाहिए।

पीढ़ी अन्तराल (जैनरेशन गैप) : पीढ़ियों में अन्तराल। विभिन्न पीढ़ियों विशेषतः अभिभावकों एवं बच्चों के बीच प्रवृत्तियों, व्यवहार और हितों में अंतर होना।

अभिशासन (गवर्नेंस) : इसे देश के आर्थिक और सामाजिक संसाधनों के प्रबंधन में प्रयोग की जाने वाली शक्तियों की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है। गवर्नेस के तीन विशिष्ट पहलू हैं। पहला है राजनीतिक शासन का रूप; दूसरा है विकास के लिए देश के आर्थिक और सामाजिक संसाधनों के प्रबंधन में अधिकारों का प्रयोग वाली प्रक्रिया; और तीसरा है नीतियां लागू करने और कार्य पूरे करने, प्रारूप बनाने, प्रतिपादित करने और लागू करने में सरकारों की क्षमता।

सीमान्त व्यक्ति (मार्जिनल मैन) : सीमान्त व्यक्ति वह है जो अपनी सांस्कृतिक अतीत की विशेषताओं को त्याग नहीं पाया है तथा नई संस्कृति को अभी आत्मसात नहीं कर सका है। इस प्रकार वह पारगमन या संक्रांति की स्थिति में है अर्थात दो संस्कृतियों के बीच में अवस्थित है।

2.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

आहूजा राम (2001), *सोसयल प्रॉब्लम इन इंडिया,* रावत पब्लिकेशंस, नई दिल्ली

मेमोरिया, डॉ. सीबी. (1960) *सोसयल प्रॉब्लम एंड सोसयल डिस–आर्गेनाइजेशन इन इंडिया,* किताब महल, इलाहाबाद

2.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न I

1) एचआई वायरस प्रसार के मुख्य स्रोत हैं संक्रमित साथी के साथ संभोग, रक्त उत्पाद चढ़ाना, संक्रमित सीरिंज या सूई से ड्रग्स का इंजेंक्शन लेना और संक्रमित माता से अजन्में बच्चे में वायरस का संचरण।

2) पर्यावरणी विकार के महत्वपूर्ण कारक हैं वन कटाई, कृषि विकास, जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिक विकास, बढ़ता शहरीकरण और विनाशकारी आधुनिक तकनीकें।

बोध प्रश्न II

1) मीडिया सांप्रदायिक हिंसा नियंत्रण में इस प्रकार की रिपोर्ट देकर सहायता कर सकता है कि जो लोगों की उग्र भावना को शांत करने में सहायक हो तथा उग्रता को और अधिक भड़काने वाली न हो।

2) युवा आंदोलन उद्देश्य की अस्पष्टता, ध्यान आकर्षित करने में तथ्यसंगत विषय का अभाव, विषय को अनुचित रूप से प्रस्तुत करने, दावों पर दबाव देने के लिए प्रभावहीन नीतियाँ अपनाने तथा अन्य समूहों द्वारा विरोध के कारण जन समर्थन प्राप्त करने में असफल हो जाते हैं।

बोध प्रश्न III

1) केन्द्रीय सतर्कता आयोग 1964 में सन्थानम समिति की सिफारिशों के आधार पर स्थापित किया गया था।

2) स्थानांतरण के सामाजिक सांस्कृतिक कारक हैं पारिवारिक संघर्ष, परिष्कृत संप्रेषण सुविधाएं जैसे परिवहन, रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा का प्रभाव, शहर आधारित शिक्षा और इनके फलस्वरूप प्रवृतियों और मूल्यों में परिवर्तन।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 3 सम–सामयिक सामाजिक समस्याएँ–II

रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 आत्महत्या

3.3 मादक द्रव्य दुरुपयोग

3.4 वयस्क अपराध

3.5 बाल अपराध

3.6 अल्पसंख्यक द्वारा सामना किए जाने वाले मुद्दे

3.7 पिछड़ा वर्ग

3.8 महिलाएँ

3.9 सारांश

3.10 शब्दावली

3.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपः

- सामाजिक समस्याओं की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे;
- विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओं की चर्चा कर सकेंगे; और
- सरकार द्वारा किए गए उपायों का वर्णन कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

किसी भी समुदाय में सामाजिक समस्या वह स्थिति अथवा परिस्थिति है जिसे अधिसंख्य लोग असहनीय मानते हैं और इसके लिए रचनात्मक सुधार के लिए सामूहिक कार्रवाई आवश्यक महसूस करते हैं। इन स्थितियों के उदाहरण हैं– बाल अपराध, ड्रग/नशे की आदत, अपराध, वेश्यावृत्ति, विवाह विच्छेद, निरंतर बेरोज़गारी, निर्धनता और मानसिक रोग।

ये सामाजिक समस्याएँ सामाजिक वर्गों के साथ बदलती रहती है। एक सामाजिक वर्ग एक सामाजिक स्तरी व्यवस्था में लोगों की बड़ी श्रेणी होती है जिसकी उनके समुदाय या समाज के अन्य क्षेत्रों के संबंध में एक जैसी सामाजिक–सांस्कृतिक स्थिति होती है। सामाजिक वर्ग संगठित तो नहीं होता लेकिन इसको बनाने वाले व्यक्तियों और परिवारों की शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक स्थिति अपेक्षाकृत एक जैसी होती है। एक ही सामाजिक वर्ग के रूप में वर्गीकृत इन लोगों के जीवन अवसर भी समान होते हैं। कुछ समाजशास्त्रियों ने सामाजिक वर्गों को मुख्यतः आर्थिक प्रकृति के रूप में माना है। जबकि अन्य ने हैसियत, जीवन शैली, प्रवृत्तियां, पहचान आदि तथ्यों पर जोर दिया है।

समाज में ऐसी किसी स्थिति जैसे अपराध, या मद्यपान का उल्लेख करने के लिए सामाजिक व्याधिकी शब्द का प्रयोग किया जाता था। फिर भी, आजकल इसका प्रयोग नहीं होता है। व्याधिकी में जैविक समरूपता के तत्त्व हैं जिसमें समाज को एक अवयवी के रूप में स्वीकार किया गया है जो रोगी अथवा स्वस्थ हो सकता है। बहुधा इसके स्थान पर सामाजिक विघटन और सामाजिक समस्या शब्दों का प्रयोग किया जाता है जो समाज के जैविक स्वरूप से मेल नहीं खाता।

जब समाज में सामाजिक नियंत्रण कमजोर होता है तो सामाजिक वर्ग के सामने समस्याएं आती है। सामाजिक नियंत्रण सामाजिक या सांस्कृतिक उपाय हैं जिनके द्वारा व्यक्तियों के व्यवहार पर व्यवस्थित तरीके से सतत अनुकूल निषेध लागू किए जाते हैं और जिनका पालन करने के लिए लोगों को प्रेरणा दी जाती है।

यह किसी समाज में अनुकूलन के असफल होने का प्रत्यक्ष परिणाम है। अनुरूपता वह व्यवहार है जो सामाजिक समूह की अपेक्षाओं के अनुसार होता है। यह भूमिकाओं या सामाजिक प्रतिमानों के प्रति मौन स्वीकृति है और जिसकी अभिव्यक्ति या तो दूसरों के जैसा होने की अनुक्रिया में या समूह की निर्धारित रिवाज़ों अथवा प्रतिमानों की अनुक्रिया के रूप में होती है। अनुरूपता को किसी समूह द्वारा निर्धारित मानक के अनुरूप किए जाने वाले प्रयत्न के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। "यह कार्यों के प्रचलित स्वरूप का स्वैच्छिक अनुकरण है जो अपेक्षाकृत उदासीन होकर विरोध और प्रतियोगिता के अन्य उग्र चरणों से भिन्न है। इसका उद्देश्य श्रेष्ठ होने की अपेक्षा इसको बनाए रखना है। इसका अधिकांश भाग बाहरी और औपचारिक रूप से संबंधित है" (कूले, 1904) यह अवधारणा प्रायः व्यक्तियों के अपने समूह में प्रचलित नियमों एवं अपेक्षाओं के प्रति अनुरूपता को अभिव्यक्त करता है। इस प्रकार किसी वाह्य समूह के प्रतिमानों के प्रति अनुरूपता को साधारणतः गैर अनुरूपता के बराबर कहा जाता है अर्थात् समूह विशेष के नियमों के प्रति गैर अनुरूपता (मैर्टोन, 1957)

3.2 आत्महत्या

आत्महत्या बड़ी सामाजिक समस्याओं में से एक है। शताब्दी वर्ष 2000 की लम्बी गर्मियों में भारत के विभिन्न भागों में आत्महत्याओं में असाधारण वृद्धि देखी गई। यद्यपि इस पर गौर नहीं किया गया फिर भी देखा गया कि 1997–98 में किसानों के सामूहिक आत्महत्या के निकट समय से आत्महत्याओं और इनके प्रयासों में भारी वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के आंकड़े संख्या और कारणों को कम बताने के बावजूद दर्शाते है कि एक वर्ष में लगभग एक लाख आत्म हत्याएं होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2012 के दौरान भारत में प्रति 100,000 लोगों की जनसंख्या में 15.29 वर्ष के युवा वर्ग में आत्महत्या की उच्चतम दर देखी गई।

समग्र पीड़ितों की संख्या के अतिरिक्त उनका भौगोलिक प्रसार, वर्गीय पृष्ठ भूमि, आय समूह, आर्थिक स्थिति, व्यावसायिक पूर्ववृत्त, आयु समूह, पारिवारिक स्थिति, आदि सभी संकेत करते हैं कि आत्महत्या अब केवल घटना आधारित नहीं है। अपितु इसने लगभग सुनियोजित चरित्र ग्रहण कर लिया है। समाज के लगभग एकमात्र निर्धनतम स्तर पर आत्महत्याओं का केन्द्रीयकरण आत्म हत्या की गहन सामाजिक–आर्थिक जड़ों को रेखांकित करता है। इसी बीच न्यायपालिका धीरे–धीरे आत्महत्या को एक अपराध मानने में अपना विचार परिवर्तित कर रही है।

प्रसिद्ध समाजशास्त्री ईडर्खेयम के द्वारा आत्महत्याओं पर किए गए अध्ययन काल से समाज शास्त्र ने ऐसी परिस्थितियों, प्रक्रियाओं और संरचनाओं को समझने और संभालने के तरीके विकसित किए हैं जो व्यक्तियों को अपना जीवन समाप्त करने की ओर ले जाता

हैं। फिर भी खेद है कि राज्य की सामाजिक नीति तथा सिविल समाज द्वारा कार्रवाई के रूप में तुलनात्मक प्रतिक्रिया का अभाव है।

आत्महत्या एक मृत्यु है जो आत्म विनाश के लिए जान–बूझ कर किए गए कार्य या फिर निष्क्रियता के घातक परिणाम को जानते हुए किया जाता है। आत्महत्या के कई प्रकार हैं।

आत्महत्याओं पर सूक्ष्म और वृहत दोनों स्तरों पर व्यापक विवरण के बिना भी पिछले कई वर्षों के ज्ञात तथ्य भारत में बहुआयामी सामाजिक संकटों के महत्वपूर्ण संकेतक लग रहे हैं। सरकारी सांख्यिकी में वर्णित अधिकांश कारण जैसे निर्धनता, बेरोजगारी, आर्थिक स्तर पर एकदम एवं अस्वीकार्य हानि, असहनीय ऋण भार, तथा सामाजिक–आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक दबावों के परिणाम दहेज मतभेद, बीमारी तथा परीक्षाओं में असफलता आदि सामाजिक परिस्थितियों से संबंधित हैं।

कम से कम इनमें से कुछ मर्ज़ समृद्ध लोगों को विरले ही प्रभावित करते हैं। इस संदर्भ में दर्खेयम के द्वारा बताई गई आत्म हत्याओं की विभिन्न श्रेणियों में से वर्तमान भारत के लिए सर्वाधिक संबंधित श्रेणी सामाजिक असंबद्धता (अकेलापन) के कारण होने वाली आत्म हत्या है। अहंवाद और परार्थवाद के कारण होने वाली आत्म हत्याओं से विपरीत)

परार्थवादी अथवा परोपकारी आत्महत्या इमाइल दर्खेयम द्वारा वर्णित तीन प्रकार की आत्म हत्याओं में से एक है। इसमें समूह या समाज से पूरी तरह संबद्ध व्यक्ति समूह कल्याण के लिए स्वयं को मार लेता है। परोपकारी आत्म–हत्या समूह की आवश्यकता पूरी करने की इच्छा से प्रेरित होती है। यह आत्महत्या आत्म बलिदान पर आधारित होती है और ऐसी सामाजिक व्यवस्थाओं में पाई जाती है जहां व्यक्ति के महत्व पर जोर नहीं दिया जाता। जापानी हारा–कीरी अपने परिवार या समूह के अपमान के बदले स्वयं को समाप्त करने का एक तरीका है।

सामाजिक असंबद्धता आत्म हत्या (एनोमिक आत्महत्या): इस प्रकार की आत्महत्या नियम न होने या सामाजिक और वैयक्तिक विसंघटन के कारण होती है। समूह की मूल्य व्यवस्था का जब व्यक्ति के लिए कोई अर्थ नहीं रह जाता और वह स्वयं को बहिष्कृत, अकेला तथा भ्रमित समझता/समझती है तो जीवन में किसी प्रकार का यह विघटन ऐसी आत्म हत्या की ओर ले जा सकता है। धनी व्यक्ति का एकदम निर्धन होना या निर्धन व्यक्ति का एकदम धनी होना व्यक्ति के व्यक्तित्त्व में स्थापित आदर्श संबद्धता में भयंकर विघटन ला सकता है। इस प्रकार असंबद्धता के कारण आत्महत्या सांस्कृतिक मूल्य व्यवस्था में उचित रूप से संबद्ध न होने और इस प्रकार स्वयं को बहिष्कृत समझने की भावना तथा सामाजिक नियमों को निरर्थक समझने का परिणाम है। असंबद्धता के कारण आत्महत्या की घटनाएं संभवतः उन समाजों में अधिक होगी जिनमें अत्यधिक सामाजिक परिवर्तन होते हैं और पारंपरिक सामाजिक अपेक्षाओं में तीव्र विघटन होता है। यह कुछ विशेष प्रकार के व्यक्तियों जैसे तलाकशुदा या अविवाहित में अधिक होने की संभावना रहती है।

अंहवादी आत्महत्या: ये आत्महत्या ऐसे कठोर सामाजिक नियमों की विद्यमानता के कारण होती है जिनके लिए व्यक्ति को जिम्मेदारी का अनुभव कराया जाता है इससे व्यक्ति पर अत्यधिक दबाव पड़ जाता है। समूह स्वयं इतना शक्तिशाली नहीं होता कि वह बाहर से व्यक्ति को पर्याप्त समर्थन और शक्ति के पर्याप्त साधन उपलब्ध करा सके। और न ही वह पर्याप्त रूप से इतना संघटित होता है ताकि नैतिक दुर्बलता और असफलता के लिए अपनी जिम्मेदारी की भावना और अपराध बोध को कमकर सके। अहंवादी आत्महत्या कठोर मूल्य व्यवस्था, कमजोर समूह संघटन तथा वैयक्तिक जिम्मेदारी अतिरेकी भावना के कारण की जाती है।

बोध प्रश्न I

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) वह कौनसा प्रसिद्ध समाजशास्त्री है जिसने आत्महत्या पर प्रमुख अध्ययन किया है?

.....

.....

.....

.....

.....

3.3 मादक द्रव्य दुरुपयोग

मादक द्रव्य व्यसन को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है: "ड्रग्स/द्रव्य (प्राकृतिक या संश्लिष्ट/कृत्रिम) के बार–बार उपभोग से उत्पन्न नियत कालिक या सतत उन्माद की वह अवस्था जो व्यक्ति और समाज के लिए हानि कारक है"।

इसकी विशेषताएं इस प्रकार हैं :

1) ड्रग निरंतरण लेने की अनियंत्रित इच्छा या आवश्यकता (विवशता) तथा इसे किसी भी तरीके से प्राप्त करना
2) मात्रा बढ़ाने की प्रवृत्ति
3) ड्रग के प्रभावों पर मानसिक (मनोवैज्ञानिक) और कभी–कभी शारीरिक निर्भरता" (यू. एन. एक्सपर्ट कमिटी ऑन ड्रग लायवल टू प्रोड्यूस एडिक्सन, विश्व स्वास्थ्य संगठन रिपोर्ट 21, जिनेवा, 1950)

भारत में लगभग 30 लाख (कुल जनसंख्या का लगभग 0.3 प्रतिशत) लोगों के विभिन्न प्रकार के ड्रग प्रयोग करने से पीड़ित होने का अनुमान है। इसमें मद्यपान करने वाले शामिल नहीं है। ये लोग विभिन्न सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक, धार्मिक और भाषाई पृष्ठभूमियों के है।

भारत मुख्यतः औषध कार्यों के लिए आवश्यक अफीम की अवैध माँग पूरा करने वाला सबसे बड़ा देश है। इसके अतिरिक्त भारत विश्व के बड़े पौपी उत्पादक क्षेत्रों के नजदीक है इसके उत्तर पश्चिम में गोल्डन क्रीसेंट तथा उत्तर पूर्व में गोल्डन ट्रायंगल (सुनहरा त्रिभूज) स्थित है। ये दो क्षेत्र भारत को द्रव्य दुरुपयोग में विशेषतः पोस्ट (पौपी) उगाने वाले क्षेत्र और साथ लगे पारगमन मार्गों को संवेदनशील बना देते हैं।

कई वर्षों बाद मादक द्रव्य (ड्रग) व्यसन चिन्ता का विषय बन गया क्योंकि पारंपरिक बंधन, सामाजिक वर्जनाएँ, आत्म नियंत्रण पर जोर और संयुक्त परिवार तथा समुदाय का नियंत्रण कमजोर होने लगा है।

औद्योगिकिकरण और शहरीकरण की प्रक्रिया ने सामाजिक नियंत्रण के पारंपरिक उपायों को प्रभावहीन बना दिया है जिससे व्यक्ति आधुनिक जीवन के तनावों और दबावों के गिरफ्त में आसानी से आ जाता है। तेजी से बदलते सामाजिक वातावरण अन्य तथ्यों के साथ मुख्यतः द्रव्य दुरुपयोग पारंपरिक और नए मानसिक विलोड़क द्रव्य दोनों के दुरुपयोग प्रसार में योगदान करता है।

कृत्रिम ड्रग्स के आने और नसों में ड्रग्स लेने से एचआईवी/एड्स ने समस्या को अधिक बढ़ा दिया विशेषतः देश के उत्तर–पूर्व क्षेत्रों में विभिन्न सर्वेक्षण कुछ सामाजिक स्तरों में, और उच्च जोखिम वाले समूहों जैसे व्यावसायिक वेश्याओं, परिवहन कर्मचारियों, घुमक्कड़ बच्चों और उत्तर–पूर्व राज्यों/सीमावर्ती क्षेत्रों तथा देश के अफीम पैदा वाले क्षेत्रों में ड्रग व्यसन के उच्च संकेन्द्रीयकरण के संकेत दिए हैं।

उत्तर–पूर्व राज्यों में स्थिति नश में ड्रग प्रयोग (आईडीयू) की अत्यधिक घटनाओं के कारण चिन्ता का विषय बन गई है। यह स्थिति एचआईवी/एड्स प्रसार के कारण मणीपुर में और भी चिंतनीय है। वहां के निवासियों में सिरो–सकारात्मक (एचआईवी की परीक्षण रिपोर्ट) लगभग 70% है।

संवैधानिक और कानूनी ढाँचा

भारतीय संविधान की धारा 47 में राज्य को निर्देश दिया गया है कि उसे पोषण स्तर को और अपने लोगों के जीवन स्तर तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने का कार्य करना चाहिए। यह उसके मुख्य कर्त्तव्यों में से एक है तथा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नशीले द्रव्यों और ड्रग्स को औषधीय कार्यों को छोड़कर उपभोग निषेध के बारे में कार्य करना उसका विशेष कर्त्तव्य है।

नार्बोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक ससरेंस एक्ट. 1985 (यथा संशोधित) का सेक्शन 71 इस प्रकार वर्णन करता है :

सरकार व्यसनकर्ताओं की पहचान और उपचार के लिए और नार्कोटिक (स्वापक) और साइकोट्रोपिक (मनोसक्रियता) द्रव्य आपूर्ति केन्द्रों की स्थापना करेंगी।

1) सरकार व्यसनकर्ताओं की पहचान, उपचार, शिक्षा, अनुवर्ती देखभाल, पुनर्वास, सामाजिक पुनःसंबद्धता के लिए स्व विवेक से उपयुक्त संख्या में केन्द्रों की स्थापना करेगी।

2) सरकार इस अधिनियम के अनुरूप उप–अनुच्छेद (1) में उल्लिखित केन्द्रों की स्थापना, नियुक्ति, देखभाल, प्रबंध और पर्यवेक्षण के तथा इन केन्द्रों में कर्मचारियों की नियुक्तियों, प्रशिक्षण, अधिकारों, कर्तव्यों के लिए नियम बना सकती है।

ड्रग्स से संबंधित ये मामले भारत सरकार द्वारा दो तरफ कार्यनीति के अर्थात् पूर्ति नियंत्रण और मांग नियंत्रण के अंतर्गत देखे जाते हैं। पूर्ति में कमी का विषय केन्द्रीय एजेंसी राजस्व के साथ प्रवर्तन एजेंसियों के अधिकार क्षेत्र में आता है जबकि मांग में कमी का कार्य सामाजिक क्षेत्र और भारत सरकार के सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के अधीन आता है।

इसके साथ–साथ द्रव्य दुरुपयोग की रोकथाम की कार्य नीतियाँ भी लागू करने इसके बुरे प्रभावों के बारे में लोगों को शिक्षित करने तथा व्यसन कर्ताओं के पुनर्वास की आवश्यकता भी उत्पन्न हो गई है। हाल ही के संयुक्त राष्ट्र संघ के दस्तावेज़ भी ड्रग नियंत्रण नीतियों में माँग में कमी को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हैं। उन्होंने सभी सदस्य देशों से वर्ष 2003 के अंत तक अवैध ड्रग्स उपभोग की माँग नियंत्रण की महत्वपूर्ण उपलब्धि के लिए तुरंत महत्वपूर्ण कदम उठाने का अनुरोध किया है।

अध्ययन के परिणाम द्रव्य दुरुपयोग और सामाजिक आर्थिक स्थितियों या जनसंख्या की सामाजिक गतिशीलता के बीच संबध दर्शाते हैं। इसलिए द्रव्य दुरुपयोगों को मनो–सामाजिक चिकित्सीय समस्या के रूप में पहचानने की आवश्यकता है जिसे समुदाय आधारित मध्यस्थताओं के माध्यम से सर्वश्रेष्ठ ढंग से किया जा सकता है।

इस पर विचार करते हुए भारत सरकार ने मांग में कमी के लिए एक तीन सूत्रीय कार्यनीति अपनाई है जो इस प्रकार है :

i) लोगों को द्रव्य दुरुपयोग के बारे में जागरूक बनाना एवं शिक्षित करना

ii) व्यसनकर्ताओं को प्रेरक परामर्श कार्यक्रमों, उपचार, अनुवर्ती देखभाल तथा सामाजिक रूप से पुनःस्थापना के द्वारा ठीक करना

iii) स्वंय सेवकों को इस विचार से द्रव्य दुरुपयोग रोकथाम/पुनर्वास प्रशिक्षण प्रदान करना कि वे आगे सेवादारों का एक शिक्षित संवर्ग बना सकेंगे।

इस प्रकार कार्यनीति का समग्र उद्देश्य द्रव्य दुरुपयोग की समस्या से निपटने के लिए समाज और समुदाय को सशक्त बनाना है।

सरकार ने द्रव्य दुरुपयोग रोकथाम से संबंधित, प्रशिक्षण, अनुसंधान, और दस्तावेज तैयार करने के लिए देश में एक सर्वोच्च संस्था के रूप में कार्य करने के लिए राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा संस्थान (नेशनल इंस्टिच्युट ऑफ सोसयल डिफेंस) नई दिल्ली के तत्त्वाधान में राष्ट्रीय द्रव्य दुरुपयोग रोकथाम केन्द्र (नेशनल सेंटर फॉर ड्रग एव्यूज प्रीवेंसन, एनसीडीएवी) की स्थापना की है।

जब हमारे समाज में द्रव्य दुरुपयोग की रोकथाम और नियंत्रण की चारों ओर प्रयत्न किए जा रहे हैं तो भी संतोषजनक प्रभाव प्राप्त करने की काफी आवश्यकता है। समस्या के कारण पूरे देश में फैले हुए हैं और द्रव्य दुरुपयोग की रोकथाम के लिए सभी संस्थाओं को महती प्रयास करने होंगे। अवैध ड्रग व्यापार एवं दुरुपयोग की प्रचुरता को रोकने में प्रवर्तन एजेंसियों के प्रयत्नों को मजबूती प्रदान करने में संवेदनशीलता और जागरूकता के द्वारा समाज को सशक्त बनाना ही एक मात्र समाधान दिखाई देता है।

3.4 वयस्क अपराध

अपराध है :

1) अपराधी कानून का उल्लंघन करने वाला व्यवहार।

2) उन कानूनी प्रावधानों (अपराधी, सिविल, सैनिक) का उल्लंघन करने वाला व्यवहार जो अपराधियों के विरुद्ध दण्डात्मक कार्रवाई निर्धारित करता है।

3) समूह की उन नैतिक संहिताओं के विपरीत कोई व्यवहार जिसके लिए औपचारिक रूप से समूह की स्वीकृति है। इसके लिए चाहे कोई कानून ही क्यों न हो।

4) कोई भी समाज विरोधी व्यवहार जो किसी व्यक्ति या समाज के लिए हानिकारक हो।

संगठित अपराधः कानून के विपरीत किसी संगठन के सदस्यों द्वारा किए जाने वाले कार्य संगठित अपराध है। अपराधी संगठन जैसे माफिया, अपराधी सिंडिकेट में कुशल विशेषज्ञों से युक्त कुछ निश्चित भूमिकाओं के साथ श्रम का विभाजन होता है। प्रस्थिति और अधिकारों का क्रम होता है, नियमों की अपनी व्यवस्था होती है तथा कठोर संगठनात्मक प्रतिबद्धता एवं अनुशासन होता है। इन संगठनों के प्रायः स्थानीय पुलिस के सदस्यों के साथ अनौपचारिक संबंध भी बन जाते हैं और कभी–कभी प्रभावशाली सामुदायिक नेताओं से भी इनका संपर्क रहता है।

सफेदपोश अपराधः पहली बार एडविन, एम सुदरलैंड ने इस शब्द का प्रयोग किया जिसका अर्थ, "सम्माननीय एवं उच्च सामाजिक स्थिति वाले व्यक्ति द्वारा अपना कर्तव्य पालन करते हुए किया जाने वाला अपराध सफेदपोश अपराध" कहलाता है। इस प्रकार इसमें उच्च वर्ग के कई अपराध शामिल नहीं है जैसे हत्या के मामले, परगमन और नशा करना क्योंकि ये उनकी व्यवसायिक जिम्मेदारी के पारंपरिक अंग नहीं है। इसमें धन का जुआ खेलने वाले और अंडर वर्ल्ड के सदस्य भी शामिल नहीं है क्योंकि वे सम्माननीय तथा ऊँची सामाजिक हैसियत वाले नहीं होते"। सफेदपोश अपराध के उदाहरण हैं : गवन

करना, धोखा करना, घूस लेना, व्यापार रोकने में कानून को मिलाना, विज्ञापन में झूँठा दिखावा करना, पेटेंटों की अतिक्रमण करना, खाद्य एवं दवाईयों में मिलावट करना, चिकित्सकों द्वारा इनाम बाँटना और रिश्वत लेना आदि।

यद्यपि सफेदपोश अपराधों से अपेक्षाकृत अधिक सामाजिक और आर्थिक क्षति होती है तो भी इनमें निम्न वर्गीय लोगों के द्वारा किए जाने वाले पारंपरिक अपराधों की अपेक्षा कम कठोर दण्ड दिया जाता है। अन्य प्रकार के अपराधों की तुलना में सफेदपोश अपराधों के लिए जनता में कम नाराजगी देखी जाती है। एक अपराधी वह है जो :

1) अपराधी कानून के उल्लंघन में सजा पाता है जिसे बड़े अपराध की सजा मिलती है।

2) समाज विरोधी कार्य करता है चाहे उसे अपराध करने की सजा मिले या न मिले। इस परिभाषा में वे व्यक्ति शामिल है जो नियमों का उल्लंघन करते हैं या ऐसे व्यवहार करते हैं जो समाज या व्यक्तियों के लिए हानिकारक हैं। इसमें वे व्यक्ति भी शामिल है जिनके द्वारा किए गए कानून के उल्लंघन का पता नहीं चलता तथा वे भी शामिल है जिनके समाज विरोधी कार्य गैर–कानूनी नहीं है।

3) 'अपराधी' शब्द के अनेक अर्थ होने के कारण एक सामान्य परिभाषा निर्धारित करने की अपेक्षा विद्वानों ने अपराधों के प्रकारों पर ध्यान केन्द्रित किया जैसे व्यावसायिक अपराधी, सफेदपोश अपराधी, संगठित अपराध करने वाले, और इसी प्रकार के अन्य अपराधी। यह महसूस किया गया कि जीवन–वृत्ति के अध्ययन पर जोर देने से अपराधों के प्रकार कानूनी जानकारी की अपेक्षा अधिक सामाजिक जानकारी प्रदान करेंगे।

कानूनी अपराधः कोई व्यक्ति बिना किसी उद्देश्य के कानून का उल्लंघन या तो अनजाने में जैसा कि दुर्बल दिमाग वाले व्यक्ति के मामले में होता है या फिर कानून इतना अस्पष्ट हो कि वास्तव में उसका पालन करना असंभव हो तो कानूनी अपराध कहलाता है।

व्यावसायिक अपराधः एक जीवन वृत्ति वाला अपराधी जो कार्य करने में दक्ष होता है। उसका अपने अपराध का एक दर्शन होता है और उसे अपने कार्य पर गर्व होता है। जालसाजी, चोरी, नकली माल बनाना और जुआ खेलना आदि कुछ अपराध व्यावसायिक अपराधियों द्वारा जीवनवृत्ति के लिए जारी रखे जाते हैं। जैसे व्यावसायिक चोर।

मनोविकृति वाले अपराधीः मानसिक रूप से अपने व्यवहार को नियंत्रित करने में असमर्थ व्यक्ति कोई अपराध कर बैठता है। मनोविकार वाले अपराधी मनोरोगी होते है जिसके कारण अवैध कार्य हो जाते हैं। चोरी करना, आग लगाना तथा लैगिंक अपराध मनोरोग संबंधी अपराध है।

परिस्थितिजन्य अपराधः कोई व्यक्ति असाधारण स्थिति के दबाव में घिरा होने की वजह से अपराध कर बैठता है। आपराधिक व्यवहार उसके सामान्य जीवन स्वरूप के विपरीत होता है और इसकी संभावना नहीं है कि वह पुनः ऐसा अपराध करेगा।

3.5 बाल अपराध

किसी समुदाय की कानूनी आयु से कम व्यक्ति के द्वारा किया गया कानून या प्रथा का उल्लंघन बाल अपराध कहलाता है। इसमें अनिवार्यतः एक कानूनी संदर्भ होता है। इसमें बच्चों या युवाओं द्वारा किए जाने वाले दुर्व्यवहार या यहाँ तक कि गंभीर रूप के दुर्व्यवहार के सभी कार्य शामिल नहीं किए जाते केवल कानून का उल्लंघन करने वाले कार्य ही शामिल किए जाते हैं। उनके कार्यों के लिए बच्चों या किशोरों की अपेक्षा बड़ों को जिम्मेदार माना जाता है और इस प्रकार जब बाल आपराधिक व्यवहार किसी वयस्क के द्वारा किया जाता है तो उसे आपराधिक व्यवहार कहा जाता है।

फिर भी, कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं जहां बच्चों पर कानूनी प्रतिबंध है जबकि वयस्क स्वतंत्र है (जैसे शराब खरीदना)। वयस्क अपराध से बाल अपराध की विभाजन रेखा 18 वर्ष की आयु है। प्रायः बाल अपराध के लिए दी जाने वाली सजा स्थानीय समुदाय की धारणा से और किशोर के दुर्व्यवहार के सामान्यतः सहने की डिग्री से प्रभावित होती है।

बाल न्याय

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (जेजेए) बच्चों की देखभाल और संरक्षण के लिए मुख्य कानून है। जेजेए की रचना उपेक्षित और बाल अपराधी बच्चों की देखभाल, संरक्षण, विकास और पुनर्वास तथा साथ ही न्याय प्रदान करने तथा उनसे संबंधित कुछ मामलों को निपटाने के लिए बनाया गया है।

बाल न्याय के उद्देश्य इस प्रकार हैं :

- जे जे अधिनियम, 2015 के अंतर्गत निर्धारित समग्र सेवाएं प्रदान करना ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि किसी भी दशा में किसी बच्चे को जेल नहीं भेजा जाएगा;
- बाल न्याय सेवाओं में गुणात्मक सुधार करना।
- बाल सामाजिक अव्यवस्था की रोकथाम तथा सामाजिक अव्यवस्था से पीड़ित बच्चों के पुनर्वास के लिए स्वैच्छिक कार्य को बढ़ावा देना।
- समुदाय आधारित कल्याण एजेंसियों का अधिकतम उपयोग करने के लिए आधारभूत संरचनाएं बनाना।

बोध प्रश्न II

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) मादक द्रव्य दुरूपयोग की क्या विशेषताएँ हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3.6 अल्पसंख्यक द्वारा सामना किए जाने वाले मुद्दे

अल्पसंख्यक किसी समुदाय में मान्य जातीय, धार्मिक या नृजातीय समूह होता है जो पूवाग्रह या भेद–भाव के कारण कुछ पीड़ित रहता है। बहुधा प्रयुक्त यह शब्द कोई तकनीकी नहीं है और वास्तव में यह समूहों की अपेक्षा लोगों की श्रेणियों को और बहुत बार अल्पसंख्यकों की अपेक्षा बहुसंख्यकों का उल्लेख करने के लिए प्रयोग किया जाता है। जैसे, यद्यपि महिलाएं न तो कोई समूह हैं और न ही कोई अल्पसंख्यक फिर भी कुछ लेखक उन्हें अल्पसंख्यक समूह कहते है क्योंकि पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं के विरूद्ध भी अल्पसंख्यकों जैसा भेद–भाव किया जाता है।

दूसरी तरफ, एक समूह जिसे विशेषाधिकार प्राप्त है या उसके विरुद्ध कोई भेद–भाव नहीं होता लेकिन संख्यात्मक रूप से वह कम है तो उसे अल्पसंख्यक समूह नहीं कहा जाएगा। इस प्रकार इस शब्द का जिस अर्थ में प्रयोग किया जाता है उसका तात्पर्य है

व्यक्तियों का ऐसा समूह जिसके विरुद्ध जनसंख्या के एक बड़े वर्ग द्वारा पूर्वाग्रह या भेद–भाव के लिए विरोध किया जाता है।

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम, 1992 के प्रावधानों के अनुसार पांच धार्मिक अल्पसंख्यक अर्थात् मुस्लिम, ईसाई, सिक्ख, जैन, बौद्ध और जोरोस्ट्रीयन (पारसी) को अल्पसंख्यक के रूप में अधिसूचित किया गया है। ये 6 समुदाय देश की कुल जनसंख्या का लगभग 18 प्रतिशत हैं।

अल्पसंख्यकों के लिए सुरक्षा उपाय

भारतीय संविधान के अंतर्गत धार्मिक एवं भाषाई अल्पसंख्यकों को कुछ सुरक्षा प्रदान की गई है। कुछ महत्वपूर्ण प्रावधान इस प्रकार हैं :

1) अनुच्छेद 29 के अंतर्गत अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति को सुरक्षित रखने का अधिकार
2) अनुच्छेद 30 के अंतर्गत शैक्षणिक संस्थाएं स्थापित करने और उनका प्रशासन चलाने का अधिकार
3) अनुच्छेद 347 भाषाई मान्यता के लिए राष्ट्रपति को निर्देश प्रदान करता
4) अनुच्छेद 350 के अंतर्गत राज्यों/केन्द्र शासित क्षेत्रों में प्रयुक्त किसी भी भाषा में किसी भी अधिकारी को समस्या समाधान के लिए प्रतिवेदन देने का अधिकार
5) अनुच्छेद 350, प्राथमिक शिक्षा स्तर पर मातृभाषा में शिक्षण की सुविधा प्रदान करता है।
6) अनुच्छेद 350 बी के अंतर्गत भाषाई अल्पसंख्यकों को प्रदत्त सुरक्षा से संबंधित सभी मामलों की जाँच के लिए एक विशेष अधिकारी प्रदान करता है।

अल्पसंख्यकों का कल्याण

मई 1983 में अल्पसंख्यकों के कल्याणार्थ एक 15 सूत्रीय कार्यक्रम आरंभ किया गया था। कार्यक्रम का स्वरूप राज्यों/केन्द्र शासित क्षेत्रों के लिए मार्गदर्शी है तथा इसका उद्देश्य अल्पसंख्यक समुदायों की सुरक्षा और शीघ्र सामाजिक–आर्थिक विकास सुनिश्चित करना है।

15 सूत्रीय कार्यक्रम 3 आयामी विचारधारा पर निर्भर है जैसे (i) सांप्रदायिक दंगों के कारण उत्पन्न स्थिति को संभालना, (ii) केन्द्रीय और राज्य सरकारों तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में भी रोजगार में अल्पसंख्यकों के पर्याप्त प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करना, और (iii) अन्य उपाय जैसे विभिन्न विकास कार्यक्रमों की देखभाल और धार्मिक स्थानों, वक्फ संपत्तियों और अल्पसंख्यकों की समस्याओं के समाधान के लाभ अल्पसंख्यकों तक उपलब्ध होने को सुनिश्चित करना।

फरवरी 2005 में पूर्ववर्ती कार्यक्रम को अल्पसंख्यकों के कल्याणार्थ प्रधानमंत्री के नए 15 सूत्रीय कार्यक्रम में संशोधित किया गया।

3.7 पिछड़ा वर्ग

भारतीय संविधान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन–जातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों को उनकी सामाजिक बाधाएं हटाने तथा उनके विभिन्न हितों को बढ़ावा देने के लिए संरक्षण एवं सुरक्षा उपाय प्रदान करता है। मुख्य सुरक्षा उपाय हैं: अस्पृश्यता उन्मूलन, सामाजिक अन्याय और शोषण के विभिन्न रूपों से सुरक्षा सभी धार्मिक सार्वजनिक संस्थाओं को जनता के सभी वर्गों के लिए खुला रखना, मुक्त भ्रमण का अधिकार देते हुए दुकानों, रेस्टौरेंटों, कुओं, तालाबों और मार्गों पर चलने की बाधाओं को हटाने, संपत्ति क्रय

करना, शैक्षिक संस्थाओं में प्रवेश लेना, राजकीय कोशों से अनुदान लेना, सेवाओं में उनके लिए आरक्षण करना, लोकसभा और राज्यों की विधान सभाओं में उन्हें विशेष प्रतिनिधित्व प्रदान करना, उनके कल्याण और हितों की सुरक्षा को बढ़ावा देना, अलग विभाग और सलाहाकार परिषदें बनाना, बंधुआ श्रमिक निषेध करना तथा अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और नियंत्रण के लिए विशेष प्रावधान बनाना आदि। ओबीसीज, एससीज और एसटीज के हितों की सुरक्षा प्रदान करने वाले तंत्र की स्थापना उनके लिए अलग आयोग बना कर की गई है।

अन्य पिछड़े वर्ग

अन्य पिछड़े वर्ग वे जातियाँ/समुदाय हैं जो राज्य सरकारों या केन्द्रीय सरकार द्वारा समय–समय पर सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के रूप में अधिसूचित किए जाते हैं।

1985 तक गृह मंत्रालय में पिछड़े वर्ग सेल (बीसीसी) पिछड़े वर्गों के मामले देखता था। 1985 में अलग से कल्याण मंत्रालय (बाद में 25.05.1998 से सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय नाम रखा गया) की संरचना के बाद अ.जा., अ.ज.जा., अं.पि.वं. तथा अल्प संख्यकों से संबंधित मामले नए मंत्रालय को भेज दिए गए।

मंत्रालय में पिछड़ा वर्ग प्रभाग पिछड़े वर्गों के सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण से संबंधित नीति, योजना बनाने और कार्यक्रम लागू करने का कार्य करता है। यह ओबीसीज के कल्याण के लिए स्थापित दो संस्थाओं से संबंधित मामलों की भी देखभाल करता है। ये संस्थाएं है राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त और विकास कोर्पोरेशन (एनबीसीएफडीसी) तथा राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (एनसीबीसी)

राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (एनसीबीसी)

सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश पर राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग अधिनियम 1993 लागू किया गया। इसमें भारत सरकार के अंतर्गत सिविल पदों और सेवाओं में आरक्षण के उद्देश्य से नागरिकों को अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसीज) की केन्द्रीय सूची में शामिल करने के लिए आवेदन लेने, जांच करने तथा सिफारिश करने और फालतू शामिल करने या कम शामिल करने की शिकायतों को लेने के लिए एक स्थाई संस्था की स्थापना की गई।

आयोग की संरचना

आयोग में एक अध्यक्ष जो सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो या रहा हो, एक समाज शास्त्री, पिछड़े वर्गों से संबंधित मामलों के दो विशेषज्ञ तथा एक सदस्य सचिव जो भारत सरकार के सचिव पद पर हो या रहा हो शामिल होते हैं। प्रत्येक सदस्य पद का कार्य भार ग्रहण करने की तारीख से 3 वर्ष की अवधि के लिए नियुक्त होता है।

आयोग के सुझाव

आयोग को सूची में पिछड़ा वर्ग के रूप में नागरिकों के किसी वर्ग को शामिल करने के आवेदन की जांच करने तथा ऐसी सूचियों में किसी पिछड़ा वर्ग के फालतू या कम शामिल करने की शिकायत सुनने तथा एनसीबीसी अधिनियम 1993 की धारा 9(1) के अंतर्गत भारत सरकार को उचित सलाह प्रदान करने का कार्य सौंपा गया है। आयोग की सलाह साधारणतः केन्द्र सरकार के लिए अधिनियम की धारा 9(2) के अंतर्गत बाध्यकारी है।

आयोग का कार्य आरंभ होने से लेकर उसे ओबीसीज की केन्द्रीय सूचियों में जातियों/समुदायों को शामिल करने/संशोधन करने तथा इन सूचियों में कुछ जातियों/समुदायों को शामिल करने के दावों को रद्द करने की 811 सलाह प्राप्त हुई है।

सरकार ने केन्द्रीय सूचियों में जातियों/समुदायों को शामिल करने की 338 सलाह स्वीकार की और उन्हें अधिसूचित किया। हाल ही में शामिल करने की 51 सलाह मंत्रिपरिषद द्वारा स्वीकार की गई है तथा उन्हें 21 सितम्बर 2000 को अधिसूचित किया गया है। सरकार ने केन्द्रीय सूचियों में शामिल करने के दावों की 415 सलाह रद्द करने की सिफारिश पर सहमति वयक्त की है। सात सलाहों पर अभी प्रक्रिया जारी है।

अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ

अनुसूचित जातियां देश की कुल जनसंख्या का 16.2% (2011 की जनगणना) है। इनमें से सबसे अधिक उत्तर प्रदेश में हैं 84 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग गाँवों में रहते है और कृषि मजदूर, बटाईदार, पट्टेदार, और मामूली किसान के रूप में कार्य करते हैं। उनमें से अधिकतर झाड़ू लगाना, सफाई करना और चमड़े का कार्य करते हैं। लगभग दो तिहाई बंधुआ मज़दूर अनुसूचित जाति के है। अ.जा. में साक्षरता दर बहुत ही कम है। अधिकतर गरीबी की रेखा से नीचे रहते हैं तथा सामाजिक और आर्थिक शोषण का शिकार हैं।

व्यावहारिक रूप से अ.जा. के लोग भेद–भाव, उत्पीड़न और अपमान का शिकार रहे हैं। प्रत्येक वर्ष मिलने वाली रिपोर्टों में इनके विरूद्ध होने वाले अपराधों की संख्या में वृद्धि दिखाई देती है। अनेक अ.जा. की महिलाएँ उच्च जाति के पुरुषों द्वारा बलात्कार की शिकार हुई हैं। दूसरी तरफ अ.जा. के लोगों का उच्च जाति के लोगों द्वारा उनकी भूमियों को हड़प कर, उन्हें कम मज़दूरी प्रदान कर, बंधुआ श्रमिक बनाकर और इसी प्रकार से उनका शोषण किया जाता है।

अ.ज.जा. देश की कुल आबादी का 8.2% (2011 की जनगणना) है। वर्तमान में भारत अफ्रीका के बाद दूसरा सबसे बड़ी अ.ज.जा. आबादी वाला देश है। भारत में जनजातियां संपूर्ण देश में फैली हुई है। इनकी संख्या कुछ सौ ले लेकर कई लाखों तक है। सबसे अधिक जनजातीय आबादी मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ में है। जनजातियों की मुख्य समस्याएँ हैंः गरीबी, ऋण–ग्रस्तता, अशिक्षा, बंधुआपन, शोषण, कुपोषण तथा बेरोज़गारी।

राष्ट्रीय अ.जा. एवं अ.ज.जा. आयोग

भारतीय संविधान निर्माताओं ने अ.जा और अं.ज.जा को पर्याप्त सुरक्षा उपाय प्रदान करने की आवश्यकता का अनुभव किया था। इस उद्देश्य हेतु इन कमजोर वर्गों के लिए सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और सेवा हितों को बढ़ावा देने के लिए विशेष प्रावधान किए गए थे।

भारतीय संविधान में अनुच्छेद 338 के अंतर्गत अ.जा. और अ.ज.जा को प्रदत्त सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच करने के लिए एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति की गई है जो प्रतिवर्ष तथा आयोग द्वारा उचित समझे जाने वाले अन्य समयों पर इन सुरक्षा उपायों की कार्य प्रणाली की जांच कर राष्ट्रपति को रिपोर्ट प्रस्तुत करता है।

अ.ज. और अ.ज.जा. को प्रदत्त सुरक्षा उपायों के लागू होने की लापरवाही को देखने के लिए एक कई सदस्यी आयोग 21.7.78 से अनु. जा. अ.ज.जा आयोग के नाम से अस्तित्त्व में आया। 1ण्9ण्87 को इसका पुनः नामकरण राष्ट्रीय अ.जा. और ज. जाति आयोग किया गया। इसका कार्य अनु जा. और अ.ज. जातियों के मामले में राष्ट्रीय स्तर पर सलाहकार संस्था के रूप में कार्य करने का था। 1990 में अनुच्छेद 338 के प्रावधानों को (65वां) संशोधन अधिनियम 1990 के द्वारा संशोधित किया गया। इसके परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय अ.जा. और अ.ज.जा. आयोग नई दिल्ली में अपने मुख्यालय के साथ 12.3.92 को अनु. जा. और अ.ज.जा आयुक्त कार्यालय के स्थान पर अस्तित्त्व में आया।

इस प्रकार राष्ट्रीय अ.जा. और अ.ज.जा. आयोग एक संवैधानिक संस्था बन गया। इसका मुख्यालय दिल्ली में है और इसके अठारह राज्य कार्यालय अगरतला, अहमदाबाद, बैंगलौर, भुवनेश्वर, भोपाल, कोलकाता, चेन्नई, चंड़ीगढ़, गुवाहाटी, हैदराबाद, जयपुर, लखनऊ, पटना, पूणे, रांची, रायपुर सिलाँग और तिरुवनन्तपुरम में है। इसके एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और पांच अन्य सदस्य होते हैं। श्रृंखला का चौथा वर्तमान आयोग मार्च 2002 में गठित किया गया।

संविधान (89 संशोधन) अधिनियम, 2003, के परिणामस्वरूप राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग और राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग ने निवर्तमान राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा जनजाति आयोग की जगह ले ली।

2004 में पहला राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग बनाया गया। 2004 में दूसरा और 2007 में तीसरा बनाया गया।

पहला राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग 2004 में बनाया गया। दूसरा 2007 और तीसरा 2010 में बनाया गया।

आयोग के कार्य एवं दायित्व

आयोग के कार्यों दायित्वों और अधिकारों का वर्णन संविधान के संशोधित अनुच्छेद 338 की धारा (5), (8) और (9) में किया गया है। धारा (5) में वर्णित आयोग के दायित्व हैं :

क) इस संविधान के अंतर्गत या उस समय लागू किसी अन्य कानून अथवा सरकार के किसी आदेश के अंतर्गत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों को प्रदत्त सुरक्षा उपायों से संबंधित मामलों की जांच करना और उन पर नजर रखना तथा ऐसे उपायों की कार्य प्रणाली का मूल्यांकन करना।

ख) अं.जा. और अ.ज.जा को प्रदत्त अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित करने के संदर्भ में विशेष शिकायतों की जाँच करना।

ग) अं.जा. और अ.ज.जा. के सामाजिक–आर्थिक विकास की योजना निर्माण प्रक्रिया में भाग लेना तथा सलाह देना और केन्द्र एवं राज्यों में उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना।

घ) प्रतिवर्ष और आयोग द्वारा उपयुक्त समझे जाने पर अन्य समयों पर इन सुरक्षा उपायों की कार्य प्रणाली के बारे में राष्ट्रपति को रिपोर्ट प्रस्तुत करना।

ङ) इन रिपोर्टों में केन्द्र और किसी राज्य द्वारा सुरक्षा उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन और अ.जा. एवं अ.ज.जा की सुरक्षा, कल्याण, एवं अन्य सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए किए जाने वाले अन्य उपायों की सिफारिशें करना; और

च) संसद द्वारा बनाए गए किसी कानून के प्रावधानों या किसी विशेष कानून के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा प्रदत्त अ.जा. और अ.ज.जा. की सुरक्षा, कल्याण और विकास तथा प्रगति से संबंधित अन्य कार्य करना।

धारा (8) धारा 5 की उपधारा (क) में वर्णित किसी मामले की या उपधारा (ख) में वर्णित किसी शिकायत की पड़ताल करते समय आयोग को किसी मुकदमें की न्यायायिक जांच करने वाले एक दीवानी अदालत के अधिकार प्राप्त होंगे और निम्नलिखित मामलों में उसे विशेष अधिकार प्राप्त होंगे, जैसे :

क) भारत के किसी भी भाग से किसी भी व्यक्ति को बुलाना, उसकी उपस्थिति निश्चित करना और शपथ लेने पर जाँच करना।

ख) किसी दस्तावेज़ की माँग करना तथा उपलब्ध कराना।

ग) शपथ–पत्र पर प्रमाण प्राप्त करना

घ) किसी अदालत या कार्यालय से सार्वजनिक रिकार्ड या इसकी प्रति की माँग करना।

ङ) गवाहियों और दस्तावेज़ों की जाँच के लिए अधिकार देना।

च) राष्ट्रपति द्वारा कानून, निर्णयों के अंतर्गत अन्य कोई मामला।

धारा (9) के अनुसार केन्द्र और प्रत्येक राज्य सरकार अ.जा. और अं.ज.जा. को प्रभावित करने वाले बड़े नीतिगत मामलों में आयोग से सलाह करेंगे।

3.8 महिलाएँ

भारतीय समाज में महिलाएँ परिवार और समाज दोनों ही क्षेत्रों में अपमान, अत्याचार और शोषण की शिकार रही है। आज महिलाओं को समाज के लिए महत्वपूर्ण, शक्तिशाली तथा सार्थक सहयोगी के रूप में माना जा रहा है। समाज में विचार धाराएं, संस्थागत व्यवहारिकी तथा प्रचलित नियम महिलाओं के विरूद्ध रहे हैं। इनमें से कुछ भेद मूलक परंपराएँ आज भी प्रचलित हैं। शिक्षा के प्रसार, महिलाओं की क्रमिक आर्थिक स्वतंत्रता तथा हमारे समाज में महिलाओं के पक्ष में कानूनी उपाय अपनाने के बावजूद असंख्य महिलाएँ निरंतर हिंसा की शिकार हैं। उनको पीटा जाता है, उनका अपहरण किया जाता है, बलात्कार किया जाता है, उन्हें जलाया जाता है और उनकी हत्याएं की जाती हैं।

स्वतंत्र भारत का संविधान महिलाओं को समान प्रस्थिति और अवसर का अधिकार प्रदान करता है। संविधान उनके पक्ष में सकारात्मक विशेष (भेदपूर्ण) नीतियां निरूपित करता है ताकि वे शदियों से उत्पीड़न और असमानता से उत्पन्न अपनी अक्षमताओं पर नियंत्रण प्राप्त कर सकें। इस प्रकार जब महिलाओं की स्थिति के बारे में औपचारिक स्थिति सामने आएगी तो महिलाओं के दैनिक जीवन की वास्तविकता काफी भिन्न होगी।

महिलाएं निरंतर हिंसा का शिकार रही हैं (जैसे बलात्कार), सामाजिक बुराइयाँ बढ़ रही हैं (जैसे दहेज़), आर्थिक क्षेत्र में भेदभाव काफी अधिक है (जैसे असमान मज़दूरी) तथा उनके अधिकार और प्रतिष्ठा का हनन करने के लिए तकनीकी परिवर्तन एवं सार्वभौमिक शक्तियों के उत्पन्न होने से नई चुनौतियां उत्पन्न हो गई हैं (जैसे बालिका भ्रूण हत्या और अनैतिक व्यापार)।

राष्ट्रीय महिला आयोग

संसद के एक अधिनियम के आधार पर 1992 में गठित राष्ट्रीय महिला आयोग (एनसीडब्ल्यू) स्वतः इस वास्तविकता को मान्यता प्रदान करता है। इसकी स्थापना महिलाओं की कानूनी, सामाजिक, और आर्थिक स्थिति पर नजर रखने के लिए की गई है।

रा.म.आ. की स्थापना जनवरी 1992 में रा.म.आ. अधिनियम 1990 के अंतर्गत की गई है जिसका कार्य है :

- महिलाओं के संवैधानिक एवं कानूनी सुरक्षा उपायों की समीक्षा करना
- कानूनी उपायों की सिफारिश करना
- समस्याओं का सहज समाधान करना और
- महिलाओं को प्रभावित करने वाले सभी नीतिगत मामलों में सरकार को सलाह देना।

एनसीडब्ल्यू से संबंधित महत्वपूर्ण विकास

लगभग दो दशक पूर्व भारत में महिलाओं की स्थिति समिति (सीएसडब्ल्यूआई) ने महिलाओं के निगरानी कार्यों, समस्याओं के सजह समाधान, तथा सामाजिक आर्थिक विकास को गति देने के लिए एक राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन करने की सिफारिश की।

- बाद में समितियों, आयोगों/राष्ट्रीय महिला महत्व योजना (1988–2000) सहित योजनाओं ने महिलाओं के लिए एक सर्वोच्च संस्था की स्थापना के लिए सिफारिश की।
- 1990 में केन्द्रीय सरकार ने प्रस्तावित आयोग की स्थापना के बारे में गैर सरकारी संस्थाओं, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं और विशेषज्ञों से इसकी संरचना, कार्यों, अधिकारों आदि के बारे में विचार–विमर्श किया।
- मई, 1990 में यह बिल लोक सभा में प्रस्तुत किया गया।
- जुलाई 1990 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने प्रस्ताव के बारे में सुझाव प्राप्त करने के लिए एक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया। अगस्त, 1990 में सरकार ने इसमें कई संशोधन किए तथा आयोग को दीवानी अदालत के अधिकार प्रदान करने के लिए नए प्रावधान इसमें शामिल किए।
- 30 अगस्त 1990 को प्रस्ताव पारित होने के बाद राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजा गया।
- प्रथम आयोग का गठन 31 जनवरी 1992 को किया गया। दूसरा आयोग जुलाई 1995 में गठित हुआ। तीसरे आयोग का गठन जनवरी 1999 में तथा चौथा आयोग जनवरी 2002 में गठित किया गया। पाँचवां आयोग फरवरी 2005 में गठित किया गया। छठा आयोग अप्रैल 2008 में गठित किया गया। आठवां आयोग सितम्बर 2014 में गठित किया गया है।

आयोग की संरचना निम्नलिखित हैः

क) अध्यक्ष महिलाओं के कार्य के लिए प्रतिबद्ध जिसका नामांकन केन्द्रीय सरकार द्वारा किया जाता है।

ख) केन्द्रीय सरकार द्वारा नामित पांच सदस्य, योग्यता, निष्ठावान तथा कानून, ट्रेड युनियन, औद्योगिक प्रबंधन, महिला स्वयं सेवी संस्थाओं (महिला कार्यकर्ता सहित), प्रशासनिक, आर्थिक विकास, स्वास्थ्य, शिक्षा, या सामाजिक कल्याण के क्षेत्रों में अनुभवी लोगों में से चुने जाते हैं।

ग) इसमें शर्त यह है कि कम से कम एक–एक सदस्य क्रमशः अ.जा. तथा अ.ज.जा. में से चुना जाएगा।

घ) सदस्य सचिव केन्द्रीय सरकार द्वारा नामित किया जाता है जो –

i) प्रबंधन, संगठनात्मक संरचना या सामाजिक आंदोलन के क्षेत्र में विशेषज्ञ होगा, या

ii) संघ की सिविल सेवा या अखिल भारतीय सेवा का सदस्य या उपयुक्त अनुभव वाला केन्द्रीय सरकार के सिविल पद पर नियुक्त कोई अधिकारी होगा।

आयोग के कर्तव्य

राष्ट्रीय महिला आयोग, 1990 की धारा 10(1) राष्ट्रीय महिला आयोग को एक 14 सूत्रीय कार्य संहिता प्रदान करती है।

आयोग के निम्नलिखित या इनमें से कोई भी कर्त्तव्य होंगे जैसे :

क) संविधान और किसी भी कानून के अंतर्गत महिलाओं को प्रदत्त सुरक्षा से संबंधित सभी मामलों की जांच एवं निरीक्षण करना

ख) केन्द्रीय सरकार को इन सुरक्षा उपायों की कार्य प्रणाली के बारे में वार्षिक और आयोग द्वारा ठीक समझे जाने वाले समयों पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना।

ग) केन्द्र या किसी राज्य द्वारा महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए इन सुरक्षा उपायों के प्रभावशाली कार्यान्वयन की सिफारिशें करना;

घ) समय–समय पर महिलाओं को प्रभावित करने वाले संविधान और अन्य कानूनों के विद्यमान प्रावधानों की समीक्षा करना तथा इन कानूनों में किसी चूक, अपर्याप्त या त्रुटि को पूरा करने के लिए संशोधनों की सिफारिश करना और कानूनी उपायों जैसे सुझाव प्रदान करना;

ङ) महिलाओं से संबंधित संविधान और अन्य कानूनी प्रावधानों के उल्लंघन के मामलों को उपयुक्त अधिकारियों के समक्ष लाना;

च) शिकायतें सुनना तथा निम्नलिखित से संबंधित मामलों में कारण बताओ नोटिस (सुओ–मोटो नोटिस) देना;

i) महिला अधिकारों का उल्लंघन;

ii) महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने के लिए बनाए गए कानून का लागू न होना और समानता तथा विकास के उद्देश्य प्राप्त करना;

iii) महिलाओ की समस्याएं कम करने, कल्याण सुनिश्चित करने तथा उन्हें राहत प्रदान करने के उद्देश्य से नीति निर्णयों, मार्गदर्शी सिद्धांतों या निर्देशों का पालन न करना तथा ऐसे मामलों से उत्पन्न विषयों को उपयुक्त अधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत करना;

छ) महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव एवं अत्याचार से उत्पन्न विशेष समस्याओं या परिस्थितियों में विशेष अध्ययन या जाँच करना तथा बाधाओं का पता लगाना ताकि उन्हें दूर करने की नीतियों की सिफारिश की जा सके;

ज) सभी क्षेत्रों में महिलाओं के उचित प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करने के सुझाव देने के लिए प्रगतिशील और शैक्षिक अनुसंधान करना और उनके विकास में बाधक तथ्यों जैसे गृह निर्माण एवं मूलभूत सेवाओं तक पहुँच, सहायक सेवा तथा कड़ी मेहनत को कम करने के लिए तकनीक, व्यावसायिक स्वास्थ्य जोखिम और उनकी उत्पादकता बढ़ाने जैसी स्थितियों की पहचान करना;

झ) महिलाओं के सामाजिक आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना और सलाह देना;

ञ) केन्द्र और किसी भी राज्य के अंतर्गत महिलाओं की विकास प्रक्रिया का मूल्यांकन करना;

ट) कारागार, सुधार गृह, महिला संस्था या अन्य संरक्षक स्थानों जहां महिलाओं को कैदी या अन्य वजहों से रखा जाता है का निरीक्षण करना या निरीक्षण का कारक बनना तथा आवश्यक होने पर सुधार कार्य के लिए संबंधित अधिकारियों से बात करना;

ठ) महिलाओं की किसी बड़ी संस्था को प्रभावित करने वाले मामलों के शामिल होने पर मुकदमों के लिए राशि प्रदान करना;

ड) महिलाओं से संबंधित किसी भी मामले की आवधिक रिपोर्ट तथा महिलाओं द्वारा सहन की जा रही कठिनाइयों में विशेष रिपोर्ट सरकार को भेजना;

ढ) केन्द्रीय सरकार द्वारा इसे प्रेषित कोई अन्य मामला।

बोध प्रश्न III

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) अन्य पिछड़ा वर्ग और अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जातियों के लिए संवैधानिक सुरक्षा के क्या उपाय हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3.9 सारांश

इस इकाई में हमने अनेक सामाजिक समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त की है। मौटे तौर पर हमने देखा कि सामाजिक समस्याएँ सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैधानिक और पर्यावरणीय कारणों से होती है। हमने यह भी देखा कि न केवल सरकार अपितु अन्य सिविल सामाजिक संस्थाएँ भी इन समस्याओं को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

3.10 शब्दावली

क्राइम : कानून के द्वारा एक दण्डनीय अपराध

अब्यूज : बुरा प्रभाव या बुरे उद्देश्य के लिए प्रयोग करना या दुरुपयोग करना

कमीशन : कोई कार्य या कुछ कर्त्तव्य पूरे करने का अधिकार, ऐसे अधिकार विशेषतः सरकार द्वारा किसी व्यक्ति या समूह को दिए जाते हैं।

डेलिंक्विंट : किसी छोटे अपराध या बुरे कार्य का अपराधी, दोषी

कास्ट : कोई भी हिन्दू वंशानुगत वर्ग जिसके सदस्यों का अन्य वर्गों से कोई सामाजिक संबंध नहीं होता लेकिन सामाजिक रूप से वे एक दूसरे के समान होते हैं और प्रायः एक ही प्रकार का व्यवसाय करते हैं।

3.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एनुअल रिपोर्ट (2003), नेशनल कमीशन फॉर वीमेन, नई दिल्ली

एनुअल रिपोर्ट (2002–2003), मिनिस्ट्री ऑफ सोशल जस्टिस एंड एमपॉवरमेंट, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया

कूले, सीएच (1902), *ह्युमैन नेचर एंड सोशल आर्डर*, स्क्राइबनर, न्यूयार्क

क्राइम इन इंडिया (2003), एनुअल रिपोर्ट, नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो, नई दिल्ली

मेर्टोन, आर.के. (1957), *सोसयल थ्योरी एंड सोसयल स्ट्रक्चर*, फ्री प्रैस, ग्लैंको, इलीनोइस

राम आहुजा (1997), *सोसयल प्रॉब्लम्स इन इंडिया*, रावत पब्लिकेशंस, नई दिल्ली

विलियम स्कोट (1988), *डिक्सनरी ऑफ सोशलॉजी*, गोयलसाब पब्लिशर्स, नई दिल्ली

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न I

आत्महत्याओं के अग्रगामी अध्ययन करने वाले प्रसिद्ध समाजशास्त्री का नाम है एमिल दुर्खाइयम प्रसिद्ध समाजशास्त्री हैं जिन्होंने प्रसिद्ध पुस्तक 'सुसाइड' लिखी है।

बोध प्रश्न II

ड्रग (द्रव्य) दुर्व्यसन की क्या मुख्य विशेषताएँ हैं?

ड्रग दुर्व्यसन की मुख्य विशेषताएँ है :

i) ड्रग लेने और इसे किसी भी प्रकार से बनाए रखने की बाध्यकारी इच्छा या आवश्यकता

ii) मात्रा बढ़ाने की प्रवृत्ति

iii) ड्रग्स के प्रभावों पर मानसिक (मनोवैज्ञानिक) और कभी–कभी शारीरिक निर्भरता

बोध प्रश्न III

संविधान में प्रदत्त मुख्य सुरक्षाएं है : अस्पृश्यता उन्मूलन, सामाजिक अन्याय और अन्य विभिन्न प्रकार के शोषणों से रक्षा, सार्वजनिक स्वरूप की धार्मिक संस्थाएँ समाज के सभी वर्गों के लिए खुली होना, दुकानों, रेस्टोरेंटों, कुओं, तालाबों और मार्गों पर सबकी पहुंच में आने वाली बाधाओं को हटाना, मुक्त भ्रमण और संपत्ति प्राप्त करने का अधिकार, उन्हें शैक्षिक संस्थाओं में प्रवेश का तथा राज्य कोश से अनुदान प्राप्त करने का अधिकार, राज्य को उनके लिए सेवाओं में आरक्षण की अनुमति देना, लोकसभा और राज्य विधान सभाओं में उन्हें विशेष प्रतिनिधित्व देना, उनके कल्याण को बढ़ावा देना और हितों की सुरक्षा के लिए अलग विभाग और सलाहकार परिषदों की स्थापना करना, बंधुआ मज़दूरी निषेध करना, तथा अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और नियंत्रण के लिए विशेष प्रावधान बनाना।

इकाई 4 सामाजिक सुरक्षा

रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 तर्काधार

4.3 सामाजिक सुरक्षा की संकल्पना

4.4 विशेषताएँ

4.5 सामाजिक सुरक्षा आंदोलन

4.6 सामाजिक सुरक्षा आंदोलन का विकास

4.7 सामाजिक सुरक्षाः भारतीय संदर्भ

4.8 राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा संस्थान (एनआईएसडी)

4.9 सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम

4.10 सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम से संबंधित समस्याएँ

4.11 सारांश

4.12 शब्दावली

4.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको उन लोगों और समूहों को रोकथाम, बचावकारी, सुधारात्मक तथा पुनर्वास सेवाएँ उपलब्ध कराने में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के महत्व से अवगत कराना है जो शोषण और कुप्रथा का आसान लक्ष्य होने के कारण पथभ्रष्ट, दोषी तथा अपराधी बन सकते हैं। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- सामाजिक सुरक्षा उपायों के पीछे तर्क को समझ सकेंगे;
- सामाजिक सुरक्षा विचारधारा और परंपरा के संरचनात्मक ढांचे को जान सकेंगे;
- सामाजिक नीतियों और कार्यक्रमों की उत्पति और उनके विकास का पता लगा सकेंगे;
- लक्ष्य समूहों पर कार्यक्रमों और सेवाओं के प्रभावों की समालोचना कर सकेंगे;
- कार्यक्रम विस्तार कार्यान्वयन की समस्याएं और सीमाएं समझ सकेंगे; और
- कार्यक्रमों को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए अपने विचार बना सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

अपराध की समस्याओं का होना और अधिक गंभीर होना तथा पथ भ्रष्ट होना सभी समाजों में चिन्ता का विषय रहा है। जब इन समस्याओं ने सामाजिक सह्यता सीमा की भी हद

पार कर दी और सामाजिक समस्या का रूप ग्रहण कर लिया तो मध्यस्थता प्रणाली आवश्यक हो गई जिसमें रोकथाम, नियंत्रण, सुधार, पुनर्वास तथा पुनर्संघटन शामिल हैं। यह कार्य सरकारी और गैर सरकारी संगठनों, एजेंसियों तथा संस्थाओं द्वारा किया जाता है। व्यवस्था और अव्यवस्था के बीच संतुलन बनाने के लिए इन समस्याओं की चुनौती से स्वयं की रक्षा हेतु इन समस्याओं का मुकाबला करने के लिए किए गए उपायों में समाज की प्रतिक्रिया की झलक होती है। यही वास्तव में सामाजिक सुरक्षा का मूलाधार है। इसलिए सामाजिक सुरक्षा संकल्पना की पर्याप्त समझ और कार्यक्रम तथा नीतियों का मूल्यांकन आवश्यक है ताकि पथभ्रष्ट, दोष और अपराध की समस्याओं पर सरकारी, गैर सरकारी संगठन एवं एजेन्सियों की प्रतिक्रिया को समझा जा सकें।

4.2 तर्काधार

समाज की चिंता सामाजिक नियंत्रण की सभी प्रणालियों के मूल में स्थित अपने सामाजिक व्यवस्था के बचाव की है। यह चिंता उन सामाजिक समस्याओं के समाधान तलाश करने के लिए सामाजिक कार्यवाही की ओर ले जाती है जो सामाजिक संस्थाओं की व्यवस्थित कार्य प्रणाली को विकृत करती है। दोष और अपराध के प्रगट होने पर ऐसे नियंत्रणकारी उपाय आवश्यक हो जाते हैं जिनमें धमकाना, बल प्रयोग, दमन करना और सजा के अन्य रूप लागू करना सम्मिलित हैं। लागू की जाने वाली प्रणाली का एक मुख्य उद्देश्य रहा है कानून भंग करने वाले व्यवहार के खतरनाक परिणामों से समाज के सदस्यों और संस्थाओं की रक्षा करना एवं सुरक्षा बनाए रखना। यद्यपि अपराध की ये प्रणालियाँ समय और स्थान के अनुसार परिवर्तित होती रहती हैं। तो भी इनका उद्देश्य एक ही रहता है– व्यक्तियों को स्वीकृत नियमों और अपेक्षाओं, परम्पराओं, मान दण्डों और कानूनों की सीमाओं में रखना।

इस संदर्भ में विचार करने पर सामाजिक सुरक्षा पथभ्रष्ट व्यवहार प्रबंध व्यवस्था का, संकट रोकथाम, और कानून निर्माण तथा कानून कार्यान्वयन का एक भाग लगता है। साधारण शब्दों में कहा जाए तो सामाजिक सुरक्षा को सामाजिक संस्थाओं और एजेंसियों की उचित संरचना को कमजोर कर सकने वाली सभी विपरीत स्थितियों, संकटों और समस्याओं के विरूद्ध समाज की सुरक्षा करने वाली कला और विज्ञान के रूप में लिया जा सकता है। पथ भ्रष्ट व्यवहार के साधारण या अनोखे रूपों की रोकथाम, नियंत्रण या सही करने की कोशिश सभी स्थानों में सामाजिक सुरक्षा विकल्पों के महत्वपूर्ण पक्ष हैं। सामाजिक सुरक्षा के साधनों और पद्धतियों की वैधता या सार्थकता के बारे में प्रश्न मानव सभ्यता के ऐतिहासिक काल से चर्चा का विषय रहे हैं, बस प्रायः इन शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ है। इस स्थिति का एक महत्वपूर्ण संकेत पूरे विश्व में सामाजिक सुरक्षा के प्रचुर मात्रा में उपलब्ध साहित्य और आंदोलन की निरंतर प्रगति है। यह लगभग निश्चित लगता है कि सामाजिक सुरक्षा का आधुनिक अर्थ अपराध शास्त्र और सुधारक सिद्धांत और व्यवहार की मुख्य विषय वस्तु के साथ जुड़ गया है।

4.3 सामाजिक सुरक्षा की संकल्पना

सामाजिक सुरक्षा शब्द इटली भाषा मूल का है। इनका यूरोपीय महाद्वीप और लैटिन अमेरिका के दण्ड सिद्धांत पर भरपूर प्रयोग होता रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1948 में अपनाने के बाद इनको प्रसिद्धि मिली। फिर भी, जैसा कि मार्क एंकेल (1965:1) ने कहा है, "यह अजीब लगता है और प्रायः इसे गलत समझ लिया जाता है; विशेषतः सामान्य कानून परंपरा में पले हुए अधिवक्ताओं या अंग्रेजी भाषी विश्व के अपराध शास्त्रियों द्वारा इन्हें गलत समझ लिया जाता है।" इन्हें एंग्लो–अमेरिकी अपराध शास्त्रीय अध्ययन की

शब्दावली में पूरी तरह ग्रहण नहीं किया गया है। जिन संदर्भों की आवर्तिता और रूपों में प्रयुक्त ये शब्द प्रायः कुछ हद तक गलत और विकृत अर्थ में प्रकट हुए हैं। यहां तक जो इनका बार–बार प्रयोग करते हैं वे भी हर बार एक ही अर्थ नहीं देते। ऐसी स्थिति में इस अभिव्यक्ति का अर्थ परिवर्तित होता है तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। जैसे, एक बार सामाजिक सुरक्षा का अर्थ अपराध के विरुद्ध समाज की रक्षा के रूप में प्रचलित हो गया था। और यह इस हद तक था कि यह रक्षा अपराध और अपराधी के निर्दयी दमन को उचित सिद्ध करता था तरीका चाहे कोई भी लागू किया गया हो। इन शब्दों की ऐसी व्याख्या उस समय स्वीकार की गई थी जब दमनकारी आपराधिक कानून को सामाजिक सुरक्षा का सर्वोत्तम संभव उपाय माना जाता था। तब सामाजिक सुरक्षा दमनकारी नीति का समानार्थी बन गया था। एक जमाना था जब आपराधिक कानून और दण्डनीति का उद्देश्य किसी भी तरीके से समाज के लिए संपूर्ण सुरक्षा को सुनिश्चित करना था।

इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि 19वीं शताब्दी के अंत तक सामाजिक सुरक्षा के नाम पर अपराध नियंत्रण का प्रत्येक दमनकारी उपाय उचित माना जाता था। जेरोम हॉल ने लिखा है कि, यदि समाज की सुरक्षा के लिए आवश्यक कोई भी उपाय अपना उद्देश्य प्राप्त कर लेता है तो वह उचित है। हॉल के विचार सामाजिक सुरक्षा सिद्धांत को आपराधिक कानून की अधिकारवादी विचारधारा के समकक्ष रखता है। इस प्रकार विचार करने पर सामाजिक सुरक्षा संकल्पना एक निर्णय व्यवस्था या सजा को स्वीकार करती है जिसमें मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश सार्वजनिक व्यवस्था या सुरक्षा में अपनी प्रकट रुचि के माध्यम से सामाजिक सुरक्षा का एक एजेंट बन जाता है।

बाद में बेंथम और बेकरिया के विचारों ने इन शब्दों के मूल अर्थों में व्यापक परिवर्तन किया। इटलियाई आपराधिक विद्यालय के प्रत्यक्ष विज्ञान शास्त्रियों ने सामाजिक सुरक्षा नीति के एक भाग के रूप में आपराधिक कानून के नैतिक आधारों के अनुरक्षण की मांग की। प्रत्यक्ष विज्ञान शास्त्रियों ने केवल दमनकारी दण्ड के द्वारा समाज की सुरक्षा के पुराने सिद्धांत के विपरीत दण्ड का नया दर्शन प्रस्तुत किया। प्रत्यक्ष विज्ञान शास्त्रियों ने आपराधिक कानून और नैतिकता के निकट संबंधों पर जोर दिया तथा इस बात पर भी बल दिया कि सामाजिक संकल्पना में सार्थक एवं पर्याप्त मात्रा में रोकथाम, सुधारात्मक और पुनर्वास संबंधी उपाय करने की आवश्यकता है ताकि अपराधियों के पुनः आपराधिक व्यवहार करने की संभावना को कम किया जा सके। इस अर्थ में सामाजिक सुरक्षा की संकल्पना में खतरनाक अपराधियों के विरुद्ध सामाजिक सुरक्षा के लिए दण्ड या सुधारात्मक उपायों का व्यवस्थीकरण करना शामिल है।

सामाजिक सुरक्षा का आधुनिक अर्थ समाज की सुरक्षा के लिए आदि कालीन उपायों, दण्ड की निदंनीय प्रतिशोध प्रणाली को स्पष्ट रूप से अस्वीकार करता है। तथा आपराधिक न्याय प्रणाली के प्रशासन में मानवता के तत्त्व लागू करता है और अपराध को सामाजिक तथ्य एवं मानवीय कार्य के रूप में मानने की आवश्यकता पर जोर देता है। इस परिप्रेक्ष्य में सामाजिक सुरक्षा अपराध समस्या विचारधारा और निर्णय प्रक्रिया की एक नई प्रवृत्ति के रूप में प्रकट होती है जो अपराध नियंत्रण के उपायों को व्यवस्थित करती है। मार्क ऐंकल दोहराते हैं कि सामाजिक सुरक्षा की आधुनिक संकल्पना अदण्डनीय प्रकार की कार्रवाई के समानार्थी है। या फिर किसी भी कीमत पर कम दण्डनीय व न्यून दमन से अपराधी के उपचार पर जोर देती है।

अपनी संकल्पना का विस्तार करते हुए मर्क ऐंकल ने लिखा है कि सामाजिक सुरक्षा की संकल्पना क्रियात्मक और बचाव कारी सामाजिक नीति है जिसका उद्देश्य अपराधी का भी बचाव करते हुए समाज का बचाव करना है। इस प्रकार सामाजिक सुरक्षा को अपराधी को कानूनी संरचना और प्रणाली में उसके मामले में उचित उपचार प्रदान करने के रूप

में परिभाषित किया गया है। इस प्रकार सामाजिक सुरक्षा को बर्बर दण्ड के स्थान पर मुख्य उपचार आधारित विकल्प के रूप में ग्रहण किया गया है।

4.4 विशेषताएँ

सार्वभौमिक रूप से सहमत कोई परिभाषा देने का प्रयास किए बिना मर्क ऐंकल (1965: 24.25) ने सामाजिक सुरक्षा विचारधारा की निम्नलिखित विशेषताओं का वर्णन किया है:

1) सामाजिक सुरक्षा यह मानती है कि अपराध से निपटने के साधन प्रायः एक व्यवस्था के रूप में होने चाहिये जिसका उद्देश्य अपराध की सजा ना देकर आपराधिक कार्यों से समाज का बचाव करना है।

2) सामाजिक सुरक्षा का उद्देश्य आपराधिक कानून की सीमा से बाहर उपायों की एक संस्था के द्वारा सामाजिक सुरक्षा प्राप्त करना है। ये उपाय अपराधी को समूह से निकाल कर या अलग करके या उपचार करके या शैक्षिक–पद्धतियों के द्वारा निष्क्रिय करने वाले होने चाहिए।

3) इस प्रकार सामाजिक सुरक्षा एक ऐसी दण्डनीय नीति को प्रोत्साहित करने की ओर ले जाती है जो अपराध की रोकथाम और अपराधियों के उपचार की सामूहिक विचारधारा की तुलना में सहज रूप से व्यक्ति का पक्ष लेती है।

4) पुनर्समाजीकरण की ऐसी प्रक्रिया केवल नए आपराधिक कानून के हमेशा मानवीकरण के तरीके से ही पूरी हो सकती है जिसमें अपराधी के न केवल आत्म विश्वास अपितु उसमें वैयक्तिक दायित्व और मानव मूल्यों की भावना पुनः प्रदान करने वाले सभी संसाधनों की सहायता लेनी होगी।

5) आपराधिक कानून और अपराधी का ऐसा मानवीकरण केवल किसी मानवीय आंदोलन से नहीं होगा। इसके विपरीत यह प्रक्रिया अपराध की घटना और अपराधी के व्यक्तित्त्व की वैज्ञानिक समझ पर आधारित होगा।

4.5 सामाजिक सुरक्षा आंदोलन

सामाजिक सुरक्षा न तो कोई नया सिद्धांत है और न ही यह अन्य सभी आपराधिक कानून और अपराध शास्त्र के अन्य सिद्धांतों के स्थान पर कोई एक सिद्धांत प्रतिपादित करता है। यह एक आंदोलन है जिसका उद्देश्य उन सभी विद्वानों को एकत्रित करना है जो यह जानते और सोचते हैं कि आधुनिक विश्व और विचारों ने पूर्वाधारित विचारों के ढांचे को छिन्न–भिन्न कर दिया है। इसका उद्देश्य सभी तकनीकी विचारों से परे मानव नवीनीकरण के अपने अनुसंधान में ऐसे लोगों का मार्गदर्शन करना भी है। यह आपराधिक कानून में वर्तमान प्रवृत्तियों के साथ सुव्यवस्था में सामाजिक भावना संप्रेषित करने का एक प्रयास है। सामाजिक सुरक्षा आंदोलन न केवल अदमनकारी विधियों से अपराध नियंत्रण में नए क्षितिज खोलता है अपितु उन अनेक बाधक तत्त्वों से छुटकारा पाने में भी सफल होता है जो अभी दण्ड सिद्धांत के लिए भार है या उनके मूलभूत मूल्य अथवा सार्थकता को बेकार महत्व प्रदान करते हैं। सामाजिक सुरक्षा आंदोलन का उद्देश्य एक ऐसी व्यापक दण्ड नीति में वैयक्तिक उपचार के सिद्धांत शामिल करना है जो वैयक्तिक सुरक्षा के माध्यम से समाज की सुरक्षा प्राप्त करने में काफी प्रभावी होंगे। आंदोलन न तो यह तथ्य छिचाता है कि यह एक लम्बी प्रक्रिया है और न ही यह धोखा देता है कि केवल कानून निर्माता, आपराधिक अधिवक्ता, न्यायधीश, जेल प्रशासक, जो प्रदत्त सजा लागू करता है, को शिक्षित करने के लिए ही अपितु लोक मत को शिक्षित करने के लिए भी अभी बहुत

कुछ करना शेष है। यह सब अतीत के साथ हिंसक विद्रोह के द्वारा नहीं अपितु मूल्यांकन और सुधार की निरंतर प्रक्रिया के माध्यम से अवश्य पूरा होगा।

4.6 सामाजिक सुरक्षा आन्दोलन का विकास

यद्यपि सामाजिक सुरक्षा का विचार पुराना है तो भी यह आपराधिक कानून और अपराध शास्त्र के साथ 20वीं शताब्दी के आरंभ में शामिल किया गया। अतः इसे आधुनिक घटना माना जाता है जिसकी प्रत्यक्ष जड़ें 19 वीं शताब्दी के अंत में दण्ड नीति की विशेषता बने व्यापक परिवर्तनों में थी। यह अपराध के विरुद्ध समाज के संघर्ष में रोकथाम की भूमिका के महत्व पर प्रकाश डालता है, अपराधी के सुधार पर आधारित दण्ड नीति की उपयोगिता को आगे रखता है, तथा अपराधियों को पुनः शिक्षित करने के सिद्धांत को प्रतिपादित करता है। यूरोप में, 'ज्ञानोदय काल' (एज ऑफ एनलाइटमेंट) ने 18वीं शताब्दी में सामाजिक सुरक्षा की संकल्पना के विकास को प्रोत्साहित किया। इसने सामाजिक सुरक्षा के सिद्धांत की जागरूकता प्रसार में और बचावकारी उपायों के प्रसार में सहायता प्रदान की।

सामाजिक सुरक्षा के आधुनिक अर्थ को लोकप्रियता 20वीं शताब्दी के आरंभ में ही प्राप्त हुई जब प्रत्यक्ष विज्ञान शास्त्रियों जैसे लैंब्रोसो, फैरी और गैरोफेलों के विचारो को व्यापक स्वीकृति मिली। अपराध विज्ञान शास्त्रियों ने इस विचार का अनुमोदन किया कि अपराधियों को सुधारने के लिए बनाए गए बचावकारी उपायों के द्वारा अपराध की रोकथाम सामाजिक सुरक्षा आंदोलन की गति बढ़ाने में सहायता करती है। नया सामाजिक सुरक्षा आंदोलन दूसरे विश्व युद्ध के बाद वाले वर्षों में विकसित हुआ। इस आंदोलन को 1945 और 1949 के बीच में उस समय महत्व मिला जब जिनेवा में 1945 में सामाजिक सुरक्षा का अध्ययन केन्द्र स्थापित किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ के सामाजिक सुरक्षा विभाग की स्थापना के साथ 1948 में इसे पहली बार अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हुई जिसने अपराध की रोकथाम और अपराधियों के उपचार के रूप में आंदोलन के उद्देश्य परिभाषित किए।

दूसरा अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा सम्मेलन 1949 में लियजियन, फ्रांस में आयोजित किया गया। जिसमें आंदोलन के प्रति व्यापक रुचि प्रकट की गई। इसके फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा समाज की स्थापना की गई। अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा समाज के बाद वाले सम्मेलनों ने पिछले दो दशकों में इस संकल्पना की बढ़ती लोकप्रियता के पर्याप्त साक्ष्य प्रदान किए। इसके विश्व के प्रत्येक हिस्से में आंदोलन के प्रसार को सुनिश्चित कर दिया। यह अब कानून कार्यान्वयन के दर्शन और सुधारों को संघटित संकल्पना में मिलाने के लिए एक सामाजिक आंदोलन के रूप में प्रकट हो रहा है। इसी के अनुसार संयुक्त राष्ट्र संघ ने सामाजिक सुरक्षा को अपराध की रोकथाम और अपराधियों के उपचार के रूप में परिभाषित किया है। आज इन शब्दों का व्यापक अर्थ में प्रयोग हो रहा है जो न केवल विचार संप्रदाय को व्यापक बनाने के अर्थ में प्रयुक्त हो रहा है, अपितु अपराध घटना को सुलझाने में कुछ मूल्यों और पद्धति पर परस्पर विचार करने वाले अनेक संगठनों द्वारा समर्थित एक व्यापक आंदोलन के रूप में भी प्रचलित हो गया है। वर्तमान संदर्भ में एक समान रूप में सामाजिक सुरक्षा विचार धारा आपराधिक कार्यों से न केवल समाज को सुरक्षित रखने वाली व्यवस्था को संपूर्ण बनाने का प्रयास है, अपितु आपराधिक स्थितियों के पहले से ही निवारण के उपायों का विस्तार करने में और उपयुक्त उपाय कारी शिक्षा एवं पुनर्वास सेवाओं के माध्यम से अपराधियों का उपचार करने में आपराधिक कानून की सीमाओं से काफी आगे तक भी जाता है। इसका उद्देश्य समाज का अपराधजनक तथ्यों और शक्तियों से न केवल अपराधियों के उपचार एवं

पुनर्वास के माध्यम से बचाव करना है अपितु समाज में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करना भी है जो मानव जीवन के स्वस्थ्य एवं समग्र उत्थान के लिए आवश्यक है।

बोध प्रश्न I

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) सामाजिक सुरक्षा से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

4.7 सामाजिक सुरक्षाः भारतीय संदर्भ

यद्यपि अभी तक भारत में सामाजिक सुरक्षा आंदोलन के इतिहास का कोई क्रमिक लेखा–जोखा तो मौजूद नहीं है तो भी यह पश्चिम में लोकप्रिय होने के तुंरत बाद भारत में पहुंच गया था। 19वीं शताब्दी के उतरार्द्ध में ब्रिटेनवासियों द्वारा भारत में स्थापित आपराधिक न्याय व्यवस्था अपराध की रोकथाम एवं नियंत्रण के महत्वपूर्ण उपाय के रूप में दमन को स्वीकार नहीं करती। संबंधित कानूनों जैसे भारतीय पुलिस अधिनियम (1861), भारतीय जेल अधिनियम (1894), भारतीय कैदी अधिनियम (1900), सुधारवादी विचारधारा अधिनियम (1876), भारतीय दण्ड संहिता (1860) और अपराधी प्रक्रिया संहिता (1884), को बनाते समय अंग्रेज आपराधिक न्याय प्रशासन के क्षेत्र में नए विचारों से अवगत थे। उन्होंने अपराध की रोकथाम व नियंत्रण के लिए इनमें से कुछ अप्रचलित, अमानवीय, और असभ्य पद्धतियों और तकनीकों को रद्द करने का प्रयास किया जिनकी उस समय उनके अपने देश में व्यापक आलोचना हो रही थी। इंगलैंड में पुलिस, न्यायपालिका तथा जेल की कार्यप्रणाली की संरचना इस प्रकार थी कि मामूली दमन और पीड़न की अनुमति प्रदान करती थी। ब्रिटिश आपराधिक कानून नीति एक सामान्य नियम के रूप में प्रतिशोध और बदले की निंदा करती थी।

20वीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में अंग्रेजों ने भारत में आपराधिक न्याय प्रशासन की संपूर्ण संरचना की और कुछ सुधार किए। भारतीय जेल समिति (1919–20) की रिपोर्ट इस तथ्य के पक्के साक्ष्य प्रस्तुत करती है। इस रिपोर्ट की कुछ महत्वपूर्ण सिफारिशें यह प्रकट करती है कि भारत में दण्ड नीति के मामलों में सामाजिक सुरक्षा काल 20वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में प्रकट हो गया था। सुधारवादी प्रशासन का इतिहास, विशेषतः 1970 के बाद का काल, अनेक परिवर्तनों से भरा हुआ है जो जोर देकर यह घोषणा करते हैं कि अपराध समस्याएँ समय की प्रकृति के साथ समाधान की माँग करती है। बाद के आयोगों और समितियों की सिफारिशों पर विस्तृत नई सुधारवादी नीतियाँ एवं परंपराएँ बनाई गई जो बार–बार इस बात पर जोर डालती रहीं कि अपराध की रोकथाम एवं अपराधियों के उपचार की नई पद्धतियां एवं तकनीकें अपराध समस्या से प्रभावशाली निजात पाने की सर्वोत्तम आशा प्रदान करती है। ये सिफारिशें बच्चों और वृद्ध अपराधियों से निपटने के

पुराने विचारों, परंपराओं तथा पद्धतियों को रद्द करने की आवश्यकता बताते हैं। ये अपराधी की रोकथाम और अपराधियों के सुधार के नए तरीके लागू करने पर जोर देती हैं।

जब अपराधी की रोकथाम और अपराधियों के उपचार के कोई नए विचार प्रचलित होते तो भारत में आपराधिक न्याय प्रशासन के सरकारी क्षेत्र में सामाजिक सुरक्षा उतनी लोक प्रिय नहीं होती। 1948 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सामाजिक सुरक्षा विभाग की स्थापना के बाद भी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया। बहुत कम लोग अपने भाषणों, व्याख्यानों तथा लेखों में सार्थक रूप से इसका प्रयोग करते थे। एक उल्लेखनीय परिवर्तन 1963 में भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय सुधारावादी सेवा ब्यूरो की स्थापना के साथ देखा गया। पुलिस, न्यायपालिका तथा सुधारवादी संस्थाओं से संबंधित अनेक लोग सामाजिक सुरक्षा को सही परिप्रेक्ष्य में समझने लगे। 1973 में राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा संस्थान में ब्यूरो के पुनर्गठन के बाद इस संकल्पना का प्रयोग व्यापक रूप में होने लगा।

4.8 राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा संस्थान (एन आई एस डी)

राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा संस्थान ने सामाजिक कल्याण मंत्रालय (अब सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय) के प्रशासनिक नियंत्रण में एक अधीनस्थ कार्यालय के रूप में कार्य आरंभ किया। वर्तमान में यह अपराध की रोकथाम तथा अपराधियों के उपचार के क्षेत्र में एक केन्द्रीय सलाहकार संस्था के रूप में कार्य कर रहा है। इसके मुख्य कार्य क्षेत्र में हैं : बाल न्याय प्रशासन, कैदियों का कल्याण, परखावधि एवं संबंधित उपाय; अनैतिक व्यापार दमन, भिक्षावृत्ति नियंत्रण तथा ड्रग दुरुपयोग की रोकथाम।

संस्थान के मुख्य कार्य हैं : केन्द्र और राज्य सरकारों को तकनीकी परामर्श देना, कानून, विनियम और नियम बनाना, सरकारी और गैर सरकारी कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देना, आंकड़े एकत्रित करना तथा अनुसंधान को बढ़ावा देना, वैज्ञानिक ज्ञान का प्रसार करना, तकनीकी ज्ञान का आदान–प्रदान करना, शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थाओं से संपर्क करना, सामाजिक सुरक्षा विषयों के बारे में जागरूकता बनाना, तथा सामाजिक सुरक्षा पर वैज्ञानिक एवं लोकप्रिय सामग्री को प्रकाशित करना। इसके अतिरिक्त यह संस्थान सामाजिक सुरक्षा तथा ड्रग दुरुपयोग रोकथाम के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्य अंतर्राष्ट्रीय तथा विदेशी एजेंसियों के साथ सामाजिक न्याय तथा अधिकारिता मंत्रालय की तकनीकी सूचना के आदान–प्रदान में भी सहायता करता है।

संस्थान देश में सामाजिक सुरक्षा के विचार को लोकप्रिय बनाने एवं प्रसारित करने में अग्रणी भूमिका निभाता है। आरंभिक वर्षों में इसके नए प्रबंधन के अंतर्गत संस्थान ने अनेक कार्यक्रम और गतिविधियाँ आरंभ की जिससे देश में सामाजिक सुरक्षा आंदोलन को मजबूत बनाने की आशा में वृद्धि हुई। लेकिन कई कारणों से यह हो न सका। यह सत्य है कि 80वे दशक के आरंभ में शुरू होने वाला सामाजिक सुरक्षा आंदोलन आरंभिक समय में ही अपना अधिकांश बल खो चुका था। सामाजिक सुरक्षा क्षेत्र से संबंद्ध अनेक व्यक्तियों का सामाजिक सुरक्षा के नाजूक क्षेत्रों की विद्यमान वास्तविकताओं से मोह भंग हो गया था। इस सबका कारण यह था कि सामाजिक सुरक्षा के उच्च आदर्श विद्यमान सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के निर्माण और कार्यान्वयन में पूरी तरह प्रसारित नहीं हो सके।

बोध प्रश्न II

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा संस्थान (एनआइएसडी) के कार्यों और गतिविधियों का वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

.....

4.9 सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम

भारत सरकार का सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का सामाजिक सुरक्षा विभाग उपेक्षित और हाशिये के व्यक्तियों के लिए, परित्यकतों, के लिए निराश्रयों के लिए देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले उपेक्षित और दोषी बच्चों के लिए, कानून के साथ संघर्ष में पड़े बच्चों के लिए, घूमकड़ बच्चों के लिए, ड्रग दुर्व्यसनकर्ताओं के लिए, अपराधियों के लिए, विशेष देखभाल और सहायता की आवश्यकता वाले वृद्धों और दूसरों के परपोषीयों के लिए अनेक प्रकार के कार्यक्रम आयोजित करता है। कार्यक्रमों और नीतियों का उद्देश्य उन्हें सम्मानित जीवन यापन के लिए साधन युक्त बनाना तथा उपयोगी सम्मानित जीवन यापन के लिए उपयोगी नागरिक बनाना है। इस प्रक्रिया में सरकार की भूमिका प्रेरक की होती है। इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में राज्य सरकारें, स्वायत्त संस्थाएँ, गैर सरकारी संस्थाएँ तथा यहाँ तक कि नैमिक विश्व भी शामिल है। संक्षेप में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों का उद्देश्य सहायता प्रदान करना, उपेक्षा दुरुपयोग और शोषण की रोकथाम करना तथा अविचनों की सहायता करना है ताकि उन्हें समाज की मुख्यधारा में शामिल किया जा सके।

सामाजिक सुरक्षा विभाग के कुछ महत्वपूर्ण कार्यक्रम निम्नलिखित है :

बच्चों की देखभाल एवं संरक्षण

विभिन्न कारणों से जरूरत मंद बच्चों को देखभाल और संरक्षण प्रदान करने के लिए बाल न्याय (बाल देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 1986 (2000, 2006, 2011 में यथा संशोधित) लागू हुआ। यह अधिनियम 18 वर्ष पूरे न करने वाले आयु तक के बच्चों की देखभाल, संरक्षण, उपचार, विकास तथा पुनर्वास सेवाएं प्रदान करता है। ये सेवाएँ न्याय निर्णय और मामलों का निष्पादन अधिकतम उनके हित में करने तथा इस अधिनियम के अंतर्गत स्थापित विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से उनके संपूर्ण पुनर्वास के लिए बाल–अनुकूल दृष्टिकोण अपनाने द्वारा प्रदान की जाती है। यह दो प्रकार के बच्चों को देखता है।

1) देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चे

बिना किसी आवास या आश्रय स्थल या घर के या जीवित रहने के किसी प्रत्यक्ष साधनों के अभाव वाले जैसे मानसिक या शारीरिक चुनौती वाले बच्चे या घातक अथवा लाइलाज रोगों से ऐसे पीड़ित बच्चे जिनकी सहायता या देखभाल करने वाला

कोई नहीं है या नियंत्रण में अक्षम अभिभावक और संरक्षकों के बच्चे परित्यक्त, गुमशुदा, अकिंचन और भागे हुए बच्चे; लैगिंक दुरुपयोग या अवैध कार्यों के लिए शोषण का शिकार या शिकार होने की संभावना वाले बच्चे और ड्रग दुरुपयोग या अवैध ड्रग व्यापार के लिए सुमेद्य या धकेले जाने की संभावना वाले बच्चे; और

2) **कानून के संघर्ष में पड़े बच्चे (तरुण)**– जिन पर किसी अपराध का आरोप है या अपराध के आरोपी बच्चे।

उपर्युक्त श्रेणियों के बच्चों के लिए संस्थागत उपाय हैं पर्यवेक्षण गृह, विशेष गृह, बाल गृह और आश्रय गृह। कानून के संघर्ष में पड़े पर्यवेक्षण गृह उन बच्चों को अस्थाई आश्रय प्रदान करते हैं जिनके विरुद्ध अभी जांच लंबित है। विशेष गृह कानून के साथ संघर्ष में पड़े बच्चों को आवास तथा पुनर्वास प्रदान करते हैं। बाल गृह परित्यक्त, अकिंचन, अभिशप्त और शोषित बच्चों को आवासीय देखभाल, उपचार और पुनर्वास सेवाएं प्रदान करते हैं। आश्रय गृह (स्वयं सेवा संगठनों द्वारा चलाए जाते हैं) तत्काल सहायता की आवश्यकता वाले केन्द्र में आने वाले बच्चों को सहायता देने का कार्य करते हैं।

अधिनियम के अंतर्गत विशेष न्याय तंत्र स्थापित किया गया है जैसे कानून के पचड़े में पड़े बच्चों के लिए बाल–न्याय तथा देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों के लिए बाल कल्याण समिति।

बच्चों की पुनर्वास और पुनःसंघटन प्रक्रिया वैकल्पिक रूप से (i) दत्तक ग्रहण (ii) देखभाल को प्रोत्साहित कर (iii) परवर्ती देखभाल संगठन को उत्तरदायी बनाकर या बच्चों को भेजकर पूरी की जाती है।

आवारा (गली के) बच्चों के लिए संघटन कार्यक्रम

इस कार्यक्रम का उद्देश्य बच्चों के निराश्रयता की रोकथाम करना तथा जीवन को घूम–घूम कर व्यतीत करने से वापिस लाने में सहायता प्रदान करना है। यह कार्यक्रम घुमक्कड़ बच्चों को आश्रय, पोषण, स्वास्थ्य, देखभाल, शिक्षा, मनोरंजन सुविधाएं प्रदान करने तथा उनके दुरुपयोग और शोषण के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करने के लिए है। इस कार्यक्रम के लक्ष्य है घर और परिवारिक बंधन रहित बच्चें अर्थात घुमक्कड़ बच्चे और विशेषतः दुरुपयोग और शोषण सुमेघ बच्चे जैसे वेश्याओं और खडंजा डालने वालों के बच्चे। स्वयं सेवी संगठनों के साथ–साथ, राज्य सरकारें, केन्द्र शासित प्रशासन, स्थानीय संस्थाएं तथा शैक्षिक संस्थाएं भी इन कार्यक्रमों को चलाने के लिए सरकार से आर्थिक सहायता प्राप्त करने के पात्र हैं।

बच्चों का अन्तर्देशीय दत्तक–ग्रहण

देश में लगभग 3 करोड़ अनाथ बच्चे हैं और उसमें से लगभग 1 करोड़ 20 लाख निराश्रित हैं। इस तथ्य पर तथा विदेशी अभिभावकों को भारतीय बच्चों के गोद देने में स्वयं सेवी संगठनों के कदाचार में लिप्त होने के तथ्यों पर विचार करते हुए भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने 1984 में और बाद में भी बच्चों के दत्तक ग्रहण से संबंधित अनेक क्रमिक निर्णय दिए। सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशानुसार अन्तर्देशीय दत्तक ग्रहण में पालन किए जाने वाले वैधानिक सिद्धांत, नियम और प्रक्रियाओं के लिए 1990 में केन्द्रीय दत्तक संसाधन एजेंसी (सीएआरए) की स्थापना की गई। सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत सीएआरए एक स्वायत्त संस्था के रूप में कार्य करती है जिसका खर्च सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के सामाजिक सुरक्षा विभाग द्वारा वहन किया जाता है। यह अनाथ, निराश्रित, घरविहीन, शोषित, अभिशप्त और सांस्थानिक बच्चों के दत्तक ग्रहण में सहायता करता है।

इसके अतिरिक्त मंत्रालय ने उन भारतीय और विदेशी एजेंसियों को मान्यता प्रदान की है जो विदेशों में भारतीय बच्चों के गोद देने के कार्य में लगे हुए हैं। देश में अंतर्देशीय दत्तक ग्रहणकार्य करने के लिए 77 एजेंसियों को मान्यता दी गई है। इसके साथ–साथ 25 देशों में 293 विदेशी एजेंसियों की भी एक सूची बनाई गई है जो भारतीय बच्चों के अन्तर्देशीय दत्तक ग्रहण का कार्य करती है। मंत्रालय ने दत्तक ग्रहण का इंतजार करने वाले बच्चों को एक विकल्प के रूप में संस्थागत देखभाल के लिए 'फोस्टर फैमिली केयर' (पोषक पारिवारिक देखभाल) के लिए दिशा निदेश भी जारी किए हैं।

वृद्ध व्यक्तियों की देखभाल

भारत में वृद्धों की आबादी काफी तेजी से बढ़ रही है। आयु की तालिका दर्शाती है कि 1971 में प्रति 100 बच्चों पर वृद्धों की संख्या लगभग 14.2 थी जो 2001 तक प्रति 100 बच्चों पर बढ़ कर 24.7 हो गई। भारतीय समाज संयुक्त परिवार प्रणाली का निश्चित रूप से शिथिल होता देख रहा है। इसके फलस्वरूप परिवार में वृद्ध जन भावात्मक रूप से उपेक्षित और शारीरिक एवं आर्थिक सहायता का अभाव अनुभव कर रहे है। सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार का सामाजिक सुरक्षा विभाग अपने विभिन्न कार्यक्रमों और गतिविधियों के द्वारा वृद्धजनों की आवश्यकताएं पूरी करता है।

वर्ष 1999 में संयुक्त राष्ट्र संघ के वृद्ध वर्ष के दौरान भारत ने एक राष्ट्रीय वृद्धजन नीति (एनपीओपी) बनाई है। एनपीओपी में वर्णित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए 1999 में मध्यस्थता के पहचाने गए क्षेत्रों के अंतर्गत निर्मित कार्य नीतियों का संचालन करने के लिए एक राष्ट्रीय वृद्धजन परिषद (एनसीओपी) की संरचना की गई है। एनसीओपी को वृद्ध व्यक्तियों से सुझाव, शिकायतें तथा समस्याएँ प्राप्त करने का कार्य सौंपा गया है। मंत्रालय ने एनसीओपी के लिए सचिवालय के रूप में 'आधार' की भी शुरुआत की है, इसका समन्वय ऐजवैल फाउंडेशन द्वारा किया जाता है। आधार वृद्धजनों को सशक्त बनाने की दिशा में शुरुआत है ताकि वे स्वेच्छी प्रत्यनों एवं प्रासानिक प्रेरणा के समन्वय के माध्यम से अपनी आवश्यकताओं के अनुसार समस्याओं का संतोषजनक समाधान प्राप्त कर सके। दिसम्बर 1999 में अपने गठन के बाद से ही आधार पूरे देश से मंत्रालय, विभिन्न सरकारी एजेंसियों तथा कार्यकर्ताओं से प्राप्त मध्यस्थ आवेदनों पर कार्य करता आ रहा है। आधार पूरे देश में प्रतिबद्ध व्यक्तियों और संगठनों की भी पहचान कर रहा है ताकि निम्नतम स्तर पर कार्य करने के लिए कार्यक्रमों को आरंभ किया सके।

वृद्धजनों के लिए समेकित कार्यक्रम लगभग 60 वर्ष की आयु से ऊपर वाले, विशेषतः कमजोर, परित्यक्त तथा विधवाओं के लिए है। इस योजना के अंतर्गत वृद्धजनों के लिए वृद्धायु गृह, डे केयर केंद्र, सचल चिकित्सा इकाइयों तथा गैर संस्थागत सेवाओं के संचालन हेतु आर्थिक अनुदान दिया जाता है। इसका उद्देश्य वृद्धजनों के जीवन स्तर को सुधारना है। मंत्रालय की निरंतर चलने वाली इस योजना के एक भाग के रूप में वृद्धजनों को सेवाएं प्रदान करने के लिए देश में 44 नए वृद्धायु गृह, 16 नए डे–केयर केंद्र तथा 17 नई सचल चिकित्सा इकाइयां स्थापित की गई हैं। इसके अतिरिक्त मंत्रालय वृद्धजनों के लिए 270 वृद्धायु गृहों, 403 डे–केयर केन्द्रों, 57 सचल चिकित्सा इकाइयों तथा 3 गैर संस्थागत परियोजनाओं को सहायता भी प्रदान कर रहा है।

मद्यपान एवं द्रव्य दुरुपयोग की रोकथाम

व्यसन की लत डालने वाले द्रव्यों का प्रयोग न जाने कब से होता आ रहा है। भारत में भी, काफी समय से शराब, अफीम और हशीश का प्रयोग किया जा रहा है। फिर भी हेरोइन, हशीश, एलएसडी आदि का एक साथ प्रयोग एक नई प्रवृति है। ऐसा माना जाता है कि पिछले दशक या उसके आस–पास ऐसे द्रव्यों का भारतीय समाज के विभिन्न

हिस्सों में होने वाला प्रयोग खतरे की सीमा तक पहुंच गया है। आज भारत सुनहरे त्रिभूज या सुनहरे चापाकार क्षेत्रों से होने वाले ड्रग्स के अवैध व्यापार का न केवल पारगमनीय देश है अपितु सार्वभौमिक पटल पर यह ड्रग्स का महत्वपूर्ण उपभोक्ता भी बनता जा रहा है। जब तक दुर्व्यसन कुछ लोगों या समाज से बाहरी लोगों के लिए समस्या था और समाज की अनौपचारिक तंत्र प्रणाली द्वारा नियंत्रित रहता था, तब तक इसने इतना अधिक ध्यान आकर्षित नहीं किया था। जब से इसका विस्तार सभी सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक स्तरों पर होने लगा है और व्यक्ति, परिवार और समाज पर इसके बढ़ते विध्वसंक प्रभाव देखे जा रहे है तब से मादक द्रव्य दुरुपयोग एक गंभीर समस्या बन गया है।

मादक द्रव्य दुरुपयोग की समस्या को हल करने के लिए एक दोपक्षीय नीति आपूर्ति नियंत्रण करना तथा मांग में कमी करने को अपनाया गया है। आपूर्ति नियंत्रण का कार्य नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो (स्वापक नियंत्रण ब्यूरों) और पुलिस देखते हैं जबकि मादक द्रव्य व्यसनकर्ताओं के शैक्षिक और पुनर्वास संबंधी कार्य देखने का दायित्व सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय ने ले रखा है। सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय निम्नलिखित कार्य कर रहा है :

i) मादक द्रव्य दुरुपयोग के बारे में जागरूक बनाना तथा लोगों को उसके दुष्प्रभावों के बारे में शिक्षित करना।

ii) मादक द्रव्य व्यसनकर्ताओं को सुधारने के लिए एक प्रेरक, काउँसलिंग (परामर्थक) उपचार, परवर्ती देखभाल तथा उपचारित मादक द्रव्य व्यसन कर्ताओं के पुन, सामाजिक संघटन के लिए कार्यक्रम चलाना।

iii) स्वयं सेवकों को मादक द्रव्य दुरुपयोग की रोकथाम और पुनर्वास प्रशिक्षण प्रदान करना।

चूंकि मादक द्रव्य की मांग में कमी के कार्यक्रम का कार्यान्वयन के लिए सामुदायिक प्रयासों की आवश्यकता होती है इसलिए मंत्रालय 1985–86 से गैर सरकारी संस्थाओं के सहयोग से मादक द्रव्य दुरुपयोग रोकथाम एवं निशेघ योजना लागू करता है। हाल ही में इस योजना की विस्तृत समीक्षा का कार्य आरंभ किया गया है। इसका दायरा बढ़ाने के लिए इसमें संशोधन किया गया है तथा स्थानीय आवश्यकताओं एवं ठोस वास्तविकताओं के प्रति अधिक संवेदी बनाने के लिए इसे और अधिक लचीला बनाया गया है। अब यह योजना गैर सरकारी संस्थाओं के सहयोग से निम्नलिखित गतिविधियाँ चलाने के लिए मद्यपान एवं मादक द्रव्य (ड्रग) दुरुपयोग की रोकथाम योजना के नए नाम से चलाई जा रही है :

- परामर्श एवं जागरूकता केन्द्र
- उपचार सहित पुनर्वास केन्द्र
- व्यसन मुक्ति शिविर
- जागरूकता निर्माण कार्यक्रम
- कार्यस्थल रोकथाम कार्यक्रम
- विद्यालयों में कार्यक्रम आयोजित करना
- समुदायों द्वारा प्रदर्शनियों का आयोजन
- समाचारों तथा जर्नल्स का प्रकाशन

मद्यपान एवं मादक द्रव्य दुरुपयोग की रोकथाम हेतु योजना तीन बार 1994, 1999 और 2008 में संशोधित की गयी थी।

मादक द्रव्य दुरुपयोग जागरूकता, परामर्श और सहायता केन्द्र

ये केन्द्र जागरूकता पैदा करने, व्यसनकर्ताओं की जाँच करने, उन्हें तथा उनके परिवारों को परामर्श (काउँसिलिंग) प्रदान करने और गंभीर व्यसनकर्ताओं को उपचार युक्त पुनर्वास केन्द्र भेजने तथा पूर्व व्यसनकर्ताओं को अनुवर्ती सहायता प्रदान करने के लिए समुदाय आधारित सेवाएँ प्रदान करते है।

उपचार सहित पुनर्वास केन्द्र

ये केन्द्र दुर्व्यसनकर्ताओं की पहचान करने, प्रेरणा देने, परामर्श देन दुर्व्यसन मुक्ति करने, परवर्ती देखभाल और उन्हें समाज की मुख्य धारा में पुनः शामिल करने के लिए समुदाय आधारित सेवाएं प्रदान करते है।

दुर्व्यसन मुक्ति केन्द्र

विस्तृत कार्यक्षेत्र प्रदान करने के लिए दुर्व्यसन मुक्ति शिविरों का प्रावधान ऐसे शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में किया गया है जहां कोई उपचार सहित पुनर्वास केन्द्र नहीं है। ये शिविर केवल उपचार–सहित पुनर्वास केन्द्र चलाने वाले संगठनों द्वारा ही आयोजित किए जाते है।

वर्तमान में लगभग 350–400 समेकित पुनर्वास केन्द्र व्यसनकर्त्ताओं के लिए देश के मंत्रालय के सहयोग से चलाये जा रहे हैं।

कार्यस्थल रोकथाम कार्यक्रम

कार्यस्थल रोकथाम कार्यक्रम को प्रोत्साहित करने के लिए कम से कम 500 कर्मचारियों वाले औद्योगिक इकाइयों/उद्यमों को 15 या 30 बिस्तर वाले उपचार सहित पुनर्वास केन्द्रों की स्थापना के लिए कुल खर्च का 25% तक आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है।

जागरूकता निर्माण कार्यक्रम

संगोष्ठी, सम्मेलन, कार्यशाला, निबंध/वाद–विवाद, प्रतियोगिताएं तथा जन मीडिया के माध्यम से प्रचार आदि गतिविधियों वाले जागरूकता निर्माण कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया गया है। शराब एवं ड्रग दुरूपयोग की रोकथाम और नियंत्रण में अभिभावकों, शिक्षकों और विचारकों की भूमिका के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए अनेक रेडियो, टेलीविजन कार्यक्रम आरंभ किए गए हैं तथा फिल्में भी बनाई गई है। समुदाय और लक्ष्य समूहों में शैक्षिक कार्य आरंभ करने के लिए स्वयं–सेवी संगठनों को आर्थिक सहायता प्रदान की जा रही है।

मंत्रालय मादक द्रव्य दुरुपयोग रोकथाम के क्षेत्र में काम कर रहे एन.जी.ओ. को रजिस्टर्ड शोध और प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में कार्यरत करके विभिन्न क्षेत्रों में काम कर रहे सेवा प्रदाताओं को स्थानीय सांस्कृतिक केन्द्रों में प्रशिक्षण देने और मादक द्रव्य दुरुपयोग कार्यक्रम का पक्षकार बनने, शोध और निरीक्षण के लिए सहायता प्रदान कर रहा है।

मंत्रालय द्वारा प्राथमिकता के आधार पर मध्यस्थता करने के लिए निम्नलिखित तीन बड़े क्षेत्रों की पहचान की गई हैः

पुनर्वासः यह समग्र वैयक्तिक पुनरुत्थान (होल पर्सन रिकवरी (डब्लूपीआर) प्राप्त करने के लिए है। यह ड्रग दुर्व्यसन कर्ताओं के लिए शारीरिक भावात्मक और मानसिक पुनर्वास

पर जोर देता है जो उन्हें शारीरिक, सामाजिक और आर्थिक आत्म निर्भर जीवन प्रदान करता है।

सामाजिक और आर्थिक सुभेद्य लक्ष्य समूहः ड्रग दुरुपयोग समस्या के लिए सामाजिक और आर्थिक सुभेद्य समूहों अर्थात् घुमक्कड़ बच्चों, व्यावसायिक लैंगिक कार्य कर्ताओं, निराश्रित महिलाओं आदि पर विशेष ध्यान दिया गया है।

मंत्रालय ड्रग्स पर औपचारिक और गैर औपचारिक शिक्षण प्रक्रियाओं के माध्यम से और ड्रग दुर्व्यसन से संबंधित सेवाओं के नेटवर्क के लिए शिक्षा प्रदान करने के लिए शिक्षा विभाग, युवा मामले और खेलविभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय तथा उनकी अधीनस्थ एजेंसियों की सहायता ले रहा है।

ड्रग दुरुपयोग रोकथाम और उपचार के क्षेत्र में अन्तरर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करने के लिए मंत्रालय ने संयुक्त राष्ट्र संघ, अन्तर्राष्ट्रीय ड्रग नियंत्रण कार्यक्रम (यूनडीसीपी) और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आइएलओ) के साथ मिलकर निम्नलिखित तीन बड़ी परियोजनाएं आरंभ की है :

- पूरे देश में सामुदायिक ड्रग पुनर्वास एवं कार्यस्थल रोकथाम कार्यक्रम
- देश के उत्तर–पूर्वी राज्यों के लिए व्यापक सामुदायिक ड्रग पुनर्वास कार्यक्रम
- देश में ड्रग दुरुपयोग के प्रसार, स्वरूप और प्रवृत्तियों पर राष्ट्रीय सर्वेक्षण कार्यक्रम।

4.10 सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम से संबंधी समस्याएँ

भारत में मजबूत वैज्ञानिक आधार पर सामाजिक सुरक्षा की प्रगति नीति, उसके कार्यान्वयन में विद्यमान कुछ समस्याओं से बाधित होती रही है। इनमें से कुछ उल्लेखनीय निम्नलिखित हैं :

- सामाजिक सुरक्षा के कुछ प्रमुख क्षेत्रों में कार्यक्रम और सेवाएँ संस्थागत संरचनाओं की एक रूपता का अभाव, नीति की घोषणाओं, प्रशासनिक नियम एवं परंपराओं और सेवाओं की गुणता तथा कार्यों की गुंजाइश के कारण भी बाधित होती है।
- संकेन्द्रित समस्याओं की जटिलता और गंभीरता की तुलना में सामाजिक सुरक्षा संचालन तंत्र अपर्याप्त लगता है।
- सामाजिक सुरक्षा की नई पद्धतियों और तकनीकों की व्यापक सैद्धांतिक स्वीकृति के बावजूद पुराने और उसके समानान्तर उपाय भी प्रायः लागू किए जाते हैं। यह तथ्य भी ज्ञात है कि अनेक सामाजिक सुरक्षा की संस्थाएँ वैयक्तिक सुधार एवं अपराधियों के पुनर्वास के आंशिक प्रावधान के साथ निरंतर पारंपरिक तरीकों से ही कार्य करती हैं।
- अनेक सामाजिक सुरक्षा की संस्थाएँ सामाजिक सुरक्षा के घोषित उद्देश्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक सामग्री और अन्य संसाधनों के निरंतर अभाव से जूझ रही हैं।
- सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की प्रवृत्ति अत्यधिक रूप से अपराध रोकथाम और अपराधियों के उपचार के लिए संस्थागत उपायों पर आश्रित रहने की है।
- सामाजिक सुरक्षा राज्य सूची में आता है और राज्य की प्रकृति केन्द्र के निर्देशों की उपेक्षा करने की होती है। इसके परिणाम स्वरूप विभिन्न सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के संबंध में की गई प्रगति संतुलित नहीं होती।

- सामाजिक सुरक्षा संस्थाओं और एजेंसियों में कार्यरत कार्मिकों को वेतन, कार्य अवस्थाओं और व्यावसायिक प्रगति और विकास के अवसरों के संदर्भ में उपयुक्त मान्यता प्रदान नहीं की गई है। इसलिए सामाजिक सुरक्षा कार्यों के लिए आवश्यक योग्यता और अभिरुचि वाले अनुकूल कार्मिकों को आकर्षित करना कठिन है।

- सामाजिक सुरक्षा सिद्धांत और परंपराओं में अनुसंधान अपर्याप्त है। इसके परिणाम स्वरूप अनेक सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों और नीतियों की सफलता या असफलता को आनुभविक आधार प्रदान करने के लिए आँकड़े बहुत कम है। (श्रीवास्तव, 1981: 224–239)

बोध प्रश्न III

टिप्पणी :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) भारत में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के स्वरूप और उनकी सीमाओं की संक्षिप्त चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

4.11 सारांश

निष्कर्ष में ऐसा लगता है कि सामाजिक सुरक्षा आंदोलन ने भारत में एक सीमित शुरुआत की है। इसके साथ अनेक समस्याएँ जैसे टुकड़े में कार्यक्रम योजना, धन का अभाव, जनसमर्थन और समझ का अभाव तथा इसी प्रकार की अन्य समस्याएं जुड़ी हुई हैं। सामाजिक सुरक्षा की प्रगति कभी भी व्यवस्थित योजना पर आधारित नहीं रही। अनुभव किया जाता है कि सामाजिक सुरक्षा की धीमी प्रगति का कारण संबंधित समस्याओं की गंभीरता के अनुरूप उसका नहीं होना है। सैद्धांतिक रूप से प्रकट सामाजिक सुरक्षा और सतह की वास्तविकताओं के बीच अन्तर भी है। भारत में सामाजिक सुरक्षा आंदोलन की समस्याओं का कोई आसान हल नहीं है। इसके लिए संसाधनों की आवश्यकता है जिनका पूरा होना कठिन है। इसके लिए कार्यक्रमों और सेवाओं की एक प्रकार की योजना बनाई जानी चाहिए जो बौद्धिक कार्य के लिए तो सरल है लेकिन व्यावहारिक रूप से कठिन दिखाई देती है। अंत में इसके लिए वास्तविक संस्थागत संरचना की आवश्यकता होती है जो प्रचलित नौकरशाही संस्कृति में अनिश्चित अपने दबाव वाले क्षेत्रों में अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहा है।

4.12 शब्दावली

सामाजिक सुरक्षा (सोशल डिफेंस) : सामाजिक अव्यवस्था; पथभ्रष्ट और अव्यवस्था पैदा करने वाली वे समस्याएँ जो सामाजिक संस्थाओं की सुचारु कार्यप्रणाली को नष्ट करने वाली है; के विरुद्ध रोकथाम, नियंत्रण और सुधारवादी उपायों से समाज की सुरक्षा करना।

रोकथाम (प्रिवेंशन) : विभिन्न रूपों में व्यक्ति और समाज को रुग्ण बनाने वाले तथ्यों और ताकतों जैसे विचलित दोष, अपराध, शोषण और दुरुपयोग जैसी समस्याओं को पहले से रोकना।

नियंत्रण (कंट्रोल) : सामाजिक समस्याओं को प्रबंधकीय सीमाओं में रखने के लिए सामाजिक और कानूनी उपायों का प्रयोग करना।

सुधार (करेक्शन) : अपराध और विचलित व्यवहार वाले और नैतिक एवं सामाजिक खतरे के वाले लोगों को उपचार, पुनर्वास और सामाजिक मुख्य धारा में शामिल करने के उपायों से मध्यस्थता।

बच्चों की देखभाल और सुरक्षा (केयर एंड प्रोटैक्शन ऑफ चिल्ड्रन) : बाल अधिनियम (बच्चों की देखभाल और सुरक्षा) 2000 के अंतर्गत बनाए और प्रदान किए जाने वाले संस्थागत और गैर संस्थागत कार्यक्रम और सेवाएँ।

4.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऐंकल, मर्क (2000), *सोसयल डिफेंस–ए माडर्न एप्रोच ऑफ क्रिमनल प्रोब्लम्स*, रॉटलेज एंड केगन पॉल, लंदन

भट्टाचार्य, एस.के. (1981), *"द कन्सेप्ट एंड एरियाज ऑफ सोसयल डिफेंस"* इन रीडिंग्स इन सोशल डिफेंस एडिटेड बाय. एन.सी. जोशी एंड वी.बी. भाटिया, व्हीलर पब्लिशिंग, इलाहाबाद

भारत सरकार (समाज कल्याण मंत्रालय) *सोसयल डिफेंस इन इंडिया* (1974), नेशनल इंस्टिच्यूट ऑफ सोसयलडिफेंस, नई दिल्ली

भारत सरकार (समाज कल्याण मंत्रालय) नेशनल इंस्टिच्यूट ऑफ सामाजिक डिफेंस (1980), ए पर्सपेक्टिव. एनआईएसडी पब्लिकेशन, नई दिल्ली

श्रीवास्तव, एस.पी. (2000), एक्सप्लेनिंग द कन्सेप्ट ऑफ सोसयल," डिफेंस वोल्यूम 49, नं. 144

4.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न I

1) सामाजिक सुरक्षा एक इटलियाई मूल का शब्द है। इसका यूरोपियाई देशों के दंड सुधार सिद्धांत में प्रायः प्रयोग हुआ है 1948 में यू.एन. सामाजिक द्वारा अपनाने के बाद यह लोकप्रिय हुआ। संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसे एक व्यापक परिभाषा दी है। इसे अपराध की रोकथाम और अपराधियों के उपचार के लिए किए जाने वाले उपायों के रूप में वर्णित किया है, फिर भी, हाल के वर्षों में सामाजिक सुरक्षा की संकल्पना को व्यापक बनाया गया है ताकि प्रायः आसानी से शोषण और दुरुपयोग का शिकार हो सकने वाले समाज के कमजोर और सुमेद्य वर्गों की सुरक्षा के लिए बचावकारी, उपचार और पुनर्वास के सामाजिक सुरक्षा उपायों को इसमें शामिल किया जा कसें। सामाजिक सुरक्षा ऐसे पुरुषों, महिलाओं और बच्चों की समस्याओं को हल करने के लिए एक नई विचार धारा के रूप में प्रकट हो रहा है जो सामाजिक पथभ्रष्ट, चूक और अपराध के विभिन्न रूपों का शिकार होते है और जिन्हें देखभाल, सुरक्षा, उपचार, पुनर्वास और सामाजिक संघटन के संस्थागत और गैर संस्थागत उपायों की आवश्यकता होती है। भारतीय संदर्भ में सामाजिक सुरक्षा अपराधों से न केवल समाज की सुरक्षा का प्रयत्न है, अपितु यह समाज में रुग्ण स्थितियों की पूर्व रोकथाम के लिए अनेक सुधारात्मक और पुनर्वास उपायों को शामिल करने से भी आगे जाता है।

बोध प्रश्न II

1) राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा संस्थान (एन आई एस डी) नई दिल्ली में सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत और प्रशासनिक नियंत्रण में एक अधीनस्थ कार्यालय है। संस्थान के मुख्य कार्यक्षेत्र हैं बाल न्याय प्रशासन, कैदियों का कल्याण, परखना और संबंधित उपाय, अनैतिक व्यापार का दमन, भिक्षावृत्ति पर रोक, नियंत्रण और ड्रग दुरुपयोग रोकथाम। हाल के वर्षों में संस्थान का कार्यक्षेत्र वृद्धजनों; बच्चों का अन्तर्देशीय दत्तक ग्रहण और घुमक्कड़ बच्चों को मुख्यधारा में शामिल करने से संबंधित क्षेत्रों को सम्मिलित करने के लिए बढ़ाया गया है।

संस्थान का उद्देश्य भारत सरकार के सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों को मजबूत बनाना और उन्हें तकनीकी सहायता प्रदान करना है। संस्थान के मुख्य कार्य हैं– आंकड़े एकत्रित करना, सूचनाओं के दस्तावेज बनाना, बाल न्याय प्रशासन, कैदियों का कल्याण, भीख मांगने की रोकथाम, ड्रग दुरुपयोग रोकथाम से संबंधित अनुसंधान और प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन करना तथा वृद्धजनों के लिए कार्यक्रम आयोजित करना।

अपने विविध कार्यों के माध्यम से एनआईएसडी उपेक्षित और हाशिये पर खड़े लोगों की, परित्यक्त और निराश्रित बच्चों की, उपेक्षित और पथभ्रष्ट बच्चों की (जिन्हें सहायता के अभाव के कारण या समाज अथवा कानून के साथ झगड़े में पड़े बच्चों को देखभाल और सुरक्षा की आवश्यकता होती है) वेश्याओं के बच्चों की, घुमक्कड़ बच्चों की, ड्रग दुर्व्यसन कर्ताओं की और अपराधियों की विशेष देखभाल, सुरक्षा व सहायता की आवश्यकता वाले वृद्धजन और परपोषियों की आवश्यकताएं पूरी करता है। एनआईएसडी के कार्यक्रमों और नीतियों का उद्देश्य उन्हें ऐसी क्षमताओं से संपन्न बनाना है जो उनके लिए सम्मान और श्रेष्ठ जीवन सुनिश्चित कर सके।

बोध प्रश्न III

1) भारत में सामाजिक सुरक्षा के बड़े कार्यक्रमों में हाल ही के समय तक शामिल कार्यक्रम थे– उपेक्षित और पथभ्रष्ट बच्चों की देखभाल एवं सुरक्षा प्रदान करना, कैदियों का कल्याण करना, परखाधीन मुक्त किए गए व्यक्तियों का सुधार और सामाजिक पुनर्संघटन करना, अनैतिक व्यापार का दमन करना, भीख मांगने की रोकथाम और नियंत्रण करना, ड्रग दुरुपयोग की रोकथाम और ड्रग आश्रित व्यक्तियों को व्यसम मुक्त या नशा मुक्त करना। अब घुमक्कड़ बच्चों के मुख्य धारा में शामिल करने के लिए, बाल सहायता लाइनों के माध्यम से आपात स्थिति में पड़े बच्चों का बचाव करने और सहायक सेवाएं प्रदान करने के लिए, बच्चों के अन्तर्देशीय दत्तक ग्रहण के लिए और आश्रित वृद्धजनों को आत्मसम्मान और प्रतिष्ठा पूर्ण जीवन प्रदान करने के लिए सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों का दायरा बढ़ाया गया है। ये सभी कार्यक्रम सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के माध्यम से भारत सरकार के द्वारा आरंभ/प्रायोजित किए जाते हैं और केन्द्र तथा राज्य सरकारों, गैर सरकारी संगठनों और स्थानीय संस्थाओं के द्वारा संचालित किए जाते हैं। विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत प्रदान की जाने वाली सेवाओं में शामिल हैं– समुदाय आधारित सेवाएं, परिवार आधारित सेवाएँ, विशेष सेवाएं और आपात दूरगामी सेवाएँ

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY